एक थका हुआ सच

देवी नागरानी की प्रकाशित पुस्तकें

सिन्धी : ग़म में भीगी ख़ुशी, आस की शमअ, उड़ जा पंछी, ग़ज़ल, सिंध जी आऊँ जाई आह्याँ।

हिन्दी : चराग़े-दिल, दिल से दिल तक, लौ दर्दे-दिल की, भजन-महिमा, सहन-ए-दिल (ग़ज़ल संग्रह)

हिन्दी से सिन्धी अनुवाद : बारिश की दुआ, अपनी धरती, रूहानी राह जा पांधीअड़ा, बर्फ जी गरमाइश, चौथी कूट

सिन्धी से हिन्दी अनुवाद : और मैं बड़ी हो गयी, पन्द्रह सिन्धी कहानियाँ, सिन्धी कहानियाँ, सरहदों की कहानियाँ, अपने ही घर में, दर्द की एक गाथा, भाषाई सौंदर्य की पगडंडियाँ-काव्य, एक थका हुआ सच (अतिया दाऊद काव्य), प्रांत-प्रांत की कहानियाँ (भाषाई सौंदर्य)

एक थका हुआ सच

(सिन्धी काव्य का हिन्दी अनुवाद)

लेखिका

अतिया दाऊद

अनुवाद

देवी नागरानी

कृति प्रकाशन, दिल्ली–110032

अमर गीत

जिस धरती की सौगंध खाकर
तुमने प्यार निभाने के वादे किये थे
उस धरती को हमारे लिये क़ब्र बनाया गया है
देश के सारे फूल तोड़कर
बारूद बोया गया है

—अतिया दाऊद

अर्पण

कल, आज और कल की नारी को

जो संघर्ष की सीमाओं पर

अपने होने का ऐलान करती है

—देवी नागरानी

अनुक्रम

प्रस्तावना

स्त्री जाति की बुनियाद बीबी हव्वा ने रखी थी, जब उसने हज़रत आदम की अनुमति के बिना गेहूँ का दाना खाया था। पता नहीं कि वह अन्तःप्रज्ञा स्त्री में इतने समय तक गुप्त क्यों रही, जब तक पश्चिम में स्त्री को अपनी समानता का अहसास हुआ, जिसका उल्लेख आगे चल कर करूँगा।

फिलहाल सिंध में स्त्री जाति की शायरी की बेहतरीन लेखिका अतिया दाऊद के संबंध में लिखता हूँ।

अतिया दाऊद वैसे तो कराची में सत्रह वर्षो से रही हैं, परन्तु मुझसे लगभग पाँच वर्ष पूर्व मिली थीं, जब वह स्टेनोग्राफर थीं और किसी प्राइवेट कम्प्यूटर पर छपाई का काम सीखती थीं। वह बातचीत में उर्दू लेखिका किशोर नाहेद की भाँति तेज़ नहीं और न उसकी ज़बान लगातार चलती है। वह बातचीत में उलझती है और क्रमबद्ध नहीं रहती है। इसलिये पहली बार मैंने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। कुछ समय बाद उसने मुझे स्वर्गीय उर्दू कवयित्री सारा शगुफ़्ता की पुस्तक 'आँखें' उपहार में दी और बताया था कि सारा में रामबू की भांति दीवानगी थी, जिसकी भंवर में उसके हाथ शायरी को टटोलते रहते थे। वह अमृता प्रीतम की सहेली थी। उसके पास कुछ समय तक रही थी। अमृता प्रीतम ने उसकी पुस्तक 'आँखें' की प्रस्तावना भी लिखी थी। अमृता ने एक पत्र में उसे लिखा था, ''मन चाहता है कि तुम समीप रहो तो तुम्हारे दुखों का विष अपनी हथेलियों से धो डालूँ।'' और सारा की मृत्यु के बाद उसने लिखा था ''यह ज़मीन ऐसी नहीं थी जहाँ वह अपने मकान का निर्माण कर पाती, इसलिए उसने उसमें कब्र का निर्माण किया था।'' प्रस्तावना में सारा की इतनी प्रशंसा पढ़कर मैंने उसकी नज़्में ग़ौर से पढ़ीं और पुस्तक में कुछ आश्चर्यजनक पंक्तियाँ पाईं। उनमें से कुछ नीचे प्रस्तुत हैं, जिनसे अनुमान लगाया जा सकेगा कि सारा शगुफ़्ता की गहन मित्रता का अतिया पर कितना प्रभाव पड़ा होगा :

"आग की तलाश में मेरे सारे चराग़ बुझ गये"
"कांटों पर कोई मौसम नहीं आता है"
"मैं अपनी कब्र को सांस लेते सुन रही हूँ"
"डूबते सूरज में से सिगरेट जलाने की आदत ने मुझे
पूरी तौर व्यवस्था की माँ बना दिया है"

इस बीच मैंने अतिया की नज़्में पढ़ीं, जो उसने कॉपी कर मुझे पढ़ने के लिए दी थीं ताकि मैं उसे अपने मत से अवगत करवा सकूँ। अतिया दाऊद की शिक्षा-दीक्षा अधिक नहीं थी, परन्तु फिर भी उसमें रामबू वाली भरपूर दैवीय देन थी। उस में सारा की दीवानगी तिल मात्र भी नहीं थी। उसकी सभी नज़्में इतनी क्रमबद्ध थीं, जितनी किसी पक्के अभ्यासी गद्यात्मक पद्य वाले कवि की हो सकती हैं। वह उपन्यासकार वर्जीन्या वोल्फ़ के कथन पर भी खरी नहीं लगी, जिसने कहा था :

"कुछ स्त्रियों को उत्साहित किया गया है और उनसे शिक्षा-दीक्षा लेने का पक्का वचन लिया गया है और जिस समय उन्होंने शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की, उसके साथ आर्थिक स्वतंत्रता तथा 'अपना विश्रामगृह' भी प्राप्त किया है, जिसे वर्जीन्या वोल्फ़ ने कला और प्रफुल्लता के लिये आवश्यक माना है। उस समय भी वास्तविक दीवारें, आर्थिक, सामाजिक एवं लैंगिक, स्त्रियों के रचनात्मक अमल और स्त्री कलाकार की मान्यता के सम्मुख आती थीं। जौहरी की दुकान में जिस प्रकार आँखें चुंधियाँ जाती हैं, उसी प्रकार अतिया की प्रत्येक नज़्म चमकदार लगती है। अतिया की प्रतिभा उपमहाद्वीप की किसी भी कवयित्री से कम नहीं है। यह बौद्धिक पीड़ा, यह लैंगिक श्रेष्ठता, यह अपनी जाति का ज्ञान जो 'विदीर्ण शरीर' शब्द में फहमीदा रियाज़ समा नहीं पाई थी, इसकी कविताओं में चमक रहा है। सैफ़ो में अभिव्यक्ति की इतनी स्वतंत्रता मिलती है और फिर कई शताब्दियों तक गुम हो जाती है। इसकी शायरी क्रांतिकारी शायरी नहीं है। क्रांति के पीछे तो मार्क्स, ट्राटस्की, बिकोनिन, माओ, होची मिन इत्यादि के दृष्टिकोण थे, सभी दृष्टिकोण दृष्टि का धोखा होते हैं और अन्त में बीच राह में भटका कर चले जाते हैं। यह विद्रोह की शायरी है। मानवीय समझ की दरिद्रता से उभरती है। तंगदिली/अदूरदर्शिता से फैलती है और परामर्श के प्रयास से सारी ज़ंजीरें तोड़ देती है और उसकी आँखों में आँखें मिलाकर कहती है : "मैं तुमसे

प्रतिभावान हूँ, मैं साहित्य की अल्ट्रासाउंड मशीन हूँ। तुम्हारा अन्तर्मन मुझसे छिपा हुआ नहीं है।"

पारिवारिक जीवन की यह कल्पना न केवल विक्टोरिया के दौर में अंग्रेज़ स्त्री को चौंका देती, परन्तु आज तक समूचा पश्चिम उसे हज़म नहीं कर पाया है। यदि कारान राक्स या शोल्यम एन्स या लेवन पोरस की भांति निम्नलिखित वाक्य किसी उपन्यास में वार्तालाप के दौरान आते या कहानी, यात्रा वृत्तांत, रिपोर्ताज, डायरी इत्यादि में आते तो उन्हें अधिक निखार देते। जिस प्रकार भ्रमर के लिए कूणियों (तालाब में उगने वाले एक पौधे का नाम) से भरे तालाब में कूणियों का चुनाव करना कठिन हो जाता है और वह जहां चाहे मंडरा सकता है वैसे ही अतिया की शायरी में चुनाव करना कठिन कार्य है। देखिये :

"मैं सारा जीवन
परायों की बनाई शराफ़त की
पुल-सुरात पर चली हूँ
पिता की पगड़ी और भाई की टोपी के लिये
मैंने हर सांस उनकी इच्छा से ली है।
जब बागडोर मेरे पति के हाथों में दी गई
तब से चाबी वाले खिलौने की भाँति
उसके इशारे पर हँसी और रोई हूँ।
अथवा
मैं प्रीत की रीत निभाना जानती हूँ
तेरे मेरे बीच में यदि नदिया होती
तो पार करके आ जाती
पहाड़ों से गुज़रना होता
तो उन्हें भी लांघ जाती
परन्तु यह जो तुमने मेरे लिये
तंगदिली का दुर्ग बनाया है
और परामर्श की छत डालकर,
रीति रस्मों का रंग दिया है
छल का फ़र्श बिछाकर
शब्दों की जादूगरी से

उसे सजाया है
तुम्हारे उस मकान में
मैं समा नहीं पाऊँगी।''

और मैं उसे केवल इतना कहूँगा, ''नूरी! (सिंधी लोक कथा की एक नायिका का नाम) कींझर झील का सारा तट तुम्हारा है, तुम कहाँ किसी के मकान में समा पाओगी!''

यह है अतिया जिसने अंग्रेज़ी साहित्य का भी अधिक अध्ययन नहीं किया है और जिसमें से साहित्य ज्वाला की भांति निकल रहा है।

अतिया की शायरी में कला को प्राथमिकता है। उसने किसी राजनैतिक डाकिये का काम नहीं किया है। वैसे भी साहित्य डाक है, कई राजनीतिज्ञ संसार में कभी संदेश पहुँचाकर ऐसे गुम हो गये जैसे बालू पर पदचिह्न गुम हो जाते हैं। सैद्धांतिक राजनीति को छोड़कर, वैचारिक राजनीति पर सोचा जाए तो कई आये गये अफ़्लातून, अरस्तु, थामस हॉब्स (Thomas Hobes), लॉक, अमेरिकी तथा फ्रांसीसी क्रांतियों वाले मान्टेस्को, जेफ़रसन, बर्क, लेनिन, ट्राटिस्की, स्टालिन, लास्की, स्ट्राची, आख़िर कितने नाम लूँ!

जहां तक उन्नति का प्रश्न है, वे किसी राजनैतिक चयनिका (Anthology) में तो आयेंगे और उनकी किसी-किसी पंक्ति में शाश्वता भी है, परन्तु वह अमर छाप जो होमर से शाह भिटाई तक शायर इंसान की आत्मा पर लगा गये, वह शायरी जो उसमें मयूर पंख हो जाती है और जीवन की तपन में घनघोर घटाओं की भांति बरसती है, वह चीज़ वैचारिक राजनीति में कहाँ है? हाँ, उस दर्शन में अवश्य है जो किसी समय राजनैतिक दृष्टिकोण के बावजूद, शाश्वत है और जिसका शायरी की तरह उन मूल्यों से संबंध है, जो राजनीति की भांति पतन गामी नहीं है।

अतिया की शायरी में समाज के उस हर मूल्य से विद्रोह है जो स्त्री में कोई हीन भावना उत्पन्न करता है। क्या तो उसने नज़्म लिखी है ''अपनी बेटी के नाम!'' मानो कोई भूचाल समाज के ढाँचे को डावांडोल कर रहा है। वह पंक्ति है या झांसी की रानी की तलवार है जो चारित्रिक मूल्य को तहस-नहस कर रही है :

''यदि कलंक लगाकर तुम्हारी हत्या करें,
मर जाना, परन्तु प्रेम अवश्य करना।''

यह पंक्ति उपमहाद्वीप की सम्पूर्ण स्त्री जाति की शायरी पर भारी है। यह शायरी मार्क्सवादी शायरी की प्रतिध्वनि नहीं है, जिसे उर्दू में तरक्क़ी पसन्द प्रगतिशील शायरी कहा जाता है। उस समय संभवतः अख़्तर हुसेन रायपुरी ने इस नाम का आविष्कार किया था जब उसने ''उर्दू और अदब और इंक्लाब'' (उर्दू और साहित्य और क्रांति) लिखी थी। मैं नहीं समझता कि अतिया इस पंक्ति पर ऐसे पछतायेगी जैसे साम्यवादी लोग एंग्लिज़ की पुस्तक 'ओरीजिन ऑफ फेमिली' (Origin of family) पर पछताये थे और फिर उन्होंने समाज में वंश को केन्द्रीय हैसियत दी थी। अतिया ने उपमा और रूपक में (तिल्सम सामिरी) सामिर नगर का इंद्रजाल बनाया है, जिसे देखकर आदमी दंग रह जाता है। इसे पढ़कर ऐना अख़्मतोवा याद आ रही है। देखो अतिया क्या कहती है :

''अमन के ताल पर मैंने जहाँ शताब्दियों से नृत्य किया था,
वहाँ मौत का सौदागर पंख फैला रहा है,
धारीदार पायजामा, फूलदार चोली और गुलाबी दुपट्टा,
मैंने पेटी में छिपाकर रखे हैं।
अपनी पहचान को निगरण कर निगल लिया है,
रास्ते पर चलते हुए आकाश में उगा हुआ चौदहवीं का चाँद देखकर
मैं तुम्हें शायद अब्दुल लतीफ़ भिटाई का बैत सुना नहीं सकती।''

मानों कराची के किसी रास्ते पर वह मुँह फेरकर आँसू पोंछ रही है। मानो अतिया ओरंगी, लाईन्स एरिया अथवा लियाकताबाद इत्यादि के किसी रास्ते पर घूम रही है और रास्ते उसके पैरों को दाग रहे हैं और कह रहे हैं कि हम पिछली शताब्दी से भयानक सपने देख रहे हैं, तुम कौन होती हो, उन सपनों में बाधा डालने वाली?

शहर उसमें अकेलेपन का अहसास बढ़ाता है और वह कहती है, ''अकेलेपन का भार लाश की तरह भारी है ''यही अहसास, अन्दर से सिन्ध की याद से मिल जाता है, उसमें इस तरह अभिव्यक्त होता है :

''मैं अकेलेपन की यात्री
दुरूह पगडंडियों पर पैदल,
तप्त बालू पर चलने की आदी,
मैं जानती हूँ मरुस्थल को शताब्दियों से,
यहाँ छाया का अस्तित्व होता नहीं है।''

कराची में निवास के दौरान मैंने भी शिद्दत से अकेलापन महसूस किया है। पहले 1943 से 1963 तक मैं जब कराची में था, तब विभाजन के समय कराची की जनसंख्या साढ़े चार लाख से कुछ अधिक थी और अब सत्तर अस्सी लाख को छू रही है। उस समय भी गीत ''सांझ की बेला, पंछी अकेला'' सुनकर शरीर में झुरझुरी आ जाती थी। अब तो बड़े-बड़े कारखाने, आकाश छूने वाले भवन, फाइव स्टार होटल, बैंक, यार्ड तथा हवाई अड्डे अकेलेपन का अहसास बढ़ा रहे हैं। लन्दन, न्यूयार्क, डाक यार्ड पैरिस, मास्को या टोक्यो में रास्ते इतने चौड़े हैं कि आदमी संकरा हो जाता है, छोटा हो जाता है। कराची भी मुम्बई अथवा पूर्व के हर बड़े नगर की भांति अकेली, उदास, बाहर से उज्ज्वल, अन्दर गंदी है। मुझे याद आ रहा है कि पुणे में कहानीकार तारा मीरचन्दाणी की दावत पर मैं, ज़रीना, रीटा शहाणी, गुनो सामताणी, हरी मोटवाणी और इन्द्रा पूनावाला बातचीत कर रहे थे कि अचानक तारा ने फ़रमाइश की कि मैं उन्हें कुछ गीत सुनाऊँ। एक तो मैंने इतनी तेज़ी से लिखा है कि मुझे शेर याद ही नहीं रहते और दूसरा कि मैं अमीर मीनाई वाली कमज़ोरी ''सौ बोतलों से शह है इस वाह-वाह में'' से ऊपर उठ चुका हूँ। बहरहाल हम लोग ऐसी अवस्था में थे, कि कुछ गीत मुझे वैसे ही याद आ गये, जैसे कबूतर संध्या के समय दरबे में लौट आते हैं। जब मैंने अपना गीत ''हेखलिड़ो मनु हेखलिड़ो'' (अकेला मन अकेला) पढ़ा, जो पहले छप चुका है तो गुनो सामताणी ने चौंककर कहा, ''अयाज़! तुम्हारी शायरी में तो भरपूर आधुनिकता (Modernism) है।'' उससे पूर्व मुम्बई में नन्द जवेरी जब मुझे उसके घर ले गया था तब उसने मुझे एक बड़ी पुस्तक 'माडर्निज़्म' उपहारस्वरूप दी थी जो वह अमेरिका से लाया था, जहाँ उसका बेटा रहता है।

गुनो सामताणी को साहित्य अकादमी पुरस्कार काफ़ी समय पहले मिला था। अभी उसे महाराष्ट्र सरकार ने एक लाख का दूसरा पुरस्कार भी दिया था और उसके साथ सुंदरी उत्तमचंदाणी, श्याम जयसिंघाणी, अर्जन शाद, कीरत बाबाणी इत्यादि को भी एक-एक लाख रुपये के पुरस्कार दिये गये थे। गुनो महाराष्ट्र सरकार में गृह सचिव हैं और मेरे उससे संबंध 1963 से थे। वह मुझे अत्यन्त ही पश्चिमी प्रतिभावान और साहित्य का अच्छा जानकार लगा। यदि मैंने अपना यात्रा वृत्तांत लिखा तो उस पर विस्तार से

लिखूँगा। हर बड़े नगर में यही आत्मा का मरुस्थल है,

''मैं जानती हूँ मरुस्थल को शताब्दियों से
यहां छाया का अस्तित्व होता नहीं है।''

कितना न अच्छा होता यदि यह शायरी गद्य की बजाय आज़ाद नज़्म (Verse Libre) में होती और मैं इसकी यूरोप व अमेरिकी कवयित्रियों से तुलना कर पाता।

कहा नहीं जा सकता कि गद्यात्मक शायर को भविष्य कब तक स्वीकार करेगा या वह उपन्यास, कहानी रिपोर्ताज या अन्य किसी विधा में समा जायेगी, परन्तु ऐसी उपमाएँ जिस भी विद्या में हों, वहीं अमर हैं:

''तुम और मैं विरोधी दिशाओं की ओर जाएं और
मेरा हाथ तुम्हारे हाथ में रहे—
इतनी लम्बी बाँह तो मेरी नहीं है!''

ऐसा लगता है मानो शीमा किरमानी मेरी नज़्म ''ये गीत प्यासे मयूरों के'' (ही गीत उञायल मोरनि जा) पर भरत नाट्यम कर रही है।

Verse Libre—फ्रेंच शब्द है आजाद नज़्म के लिये, फ्रांस का यह प्रथम आविष्कार था।

यह नगर जो स्वर्गीय अली मुहम्मद शाह जी के कथनानुसार एक सलाद के प्याले (Salad Bowl) की भांति है, उसमें मनुष्य की हैसियत सलाद के पत्ते से भी कम है। थार मरुस्थल का विस्तृत आकाश देखकर (निकट अतीत में अतिया दाऊद और उसका पति थार मरुस्थल से हो आये हैं और वर्षा ऋतु में वहाँ के लोगों के नृत्य देख आये हैं) लोग ऐसा समझते हैं कि मैं इस संसार से भी बड़ा हूँ। यह संसार मुझमें है, मैं इस संसार में नहीं हूँ।

साम्यवादी (Communist) समूह का नारा झूठा सिद्ध हुआ और यह भी सिद्ध हुआ कि मनुष्य को भेड़िये के नाखून होंगे तो वह तुम्हारी आँखें निकाल देगा, वह स्वाभाविक रूप से अत्याचारी और मूर्ख है और प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ दर्जा हासिल करने के लिये उसे संघर्ष करना है। इसी विषय पर कई वर्ष पूर्व आर्थर कोइस्लर ने अपनी पुस्तक 'योगी और कमीसार' लिखी थी, जिसका उद्देश्य यह था कि कमीसार में जब तक योगी की विशेषताएँ नहीं हैं, उसकी सफलता असंभव है। दुनिया को अर्थशास्त्र से अधिक चरित्र की आवश्यकता है। इस चरित्र का स्वतंत्रता

में लालन-पालन होता है और यह कोई किसी पर आच्छादित नहीं कर सकता परन्तु यह मानवीय विवेक में से यों स्वतः उभरती है, जिस प्रकार दक्षिणी सिन्ध में वर्षा के बाद धरती से कुक्कुरमुते उभरते हैं। स्वयं मेरे जीवन में जो साम्यवादी आये हैं, उनमें से निर्लज साम्यवादी निकाल दिये जायें तो शेष ऐसे दर्शन की तलाश में हैं कि मुक्ति का मार्ग दिखा पायें जो पूंजीवादी अर्थशास्त्र में नहीं मिलता। यूरोप के सभी साम्यवादी अब यह मान रहे हैं कि स्वीडन में कल्याणकारी राज्य की कल्पना आदर्श राज्य की तुलना है। स्कैंडेन्योरिया जिसका स्वीडन नार्वे सहित भाग है, उसके विचार मनुष्य के शारीरिक संबंध के बारे में अत्यन्त क्रांतिकारी हैं।

यूरोप में स्त्री जाति के आन्दोलन पर लिखूँ, उस से पूर्व केवल यह लिखना चाहता हूँ कि अतिया जो मूलेडिनो लाड़क ग्राम नोशहिरो फ़िरोज ज़िले में जन्मी और जवान हुई और सत्रह वर्षों से कराची में निवास कर रही है, कराची में वही अकेलापन तथा उदासी महसूस करती है जो हर संवेदनशील साहित्यकार तीसरी दुनिया के बड़े नगर में महसूस करता है, जहां भीड़ है; जहाँ लोग एक दूसरे को धक्का देकर अपने लिये रास्ता बनाते हैं और जहाँ ''कष्टों में संसार, खुशी दिखाये खोखली'' वाली अवस्था है। तीसरी दुनिया में स्त्री सबसे दलित वर्ग है और न केवल उस पर वही ज़बरदस्ती तथा अपहरण हो रहा है परन्तु बढ़ रहा है। उसकी कविताएँ कराची के शहरी जीवन में घृणा और विद्रोह को अभिव्यक्त करती हैं :

''जब वह किसी निपुण टाइपिस्ट की भांति
मेरे शरीर के टाइपराइटर पर
अपनी अंगुलियों को तेज़ी से हरकत में लाता है
तब मैं उसे वही परिणाम देती हूँ,
जो उसे चाहिए होता है।'' (मशीनी आदमी)

''तुम जिस कोण से देखोगे
मैं तुम्हें उस अनुसार नज़र आऊँगी
रहस्य की दृष्टि से देखोगे
तो गोश्त का ढेर हूँ,
प्रसूति गृह की बिल्ली की दृष्टि से देखोगे,

तो रक्त का तालाब हूँ,
बच्चे की तरह खिलौना तोड़कर देखोगे
तो अन्दर कुछ भी नहीं हूँ।
मेरे शरीर के आवां पर यात्रा करते हुए
तुम स्वाद की जिस मंज़िल तक पहुँचते हो
वहीं से मेरा रहस्य प्रारम्भ होता है
तुम डुबकी लगाने से समुद्र के दूसरे तट को छू नहीं सकते
यदि समझ सको तो रहस्य हूँ,
सोख सको तो बूँद हूँ,
महसूस कर सको तो प्यार हूँ।

यह यूनानी कवयित्री सैफ़ो की बहन, उससे कई शताब्दियाँ बाद में जन्मी है और इसकी पच्चीस तीस नज़्में उसे अमर जीवन देने के लिये काफ़ी है। इनका चुनाव कैसे करूँ? इनका चुनाव हो नहीं सकता, हर नज़्म हीरे की भांति है और उनका यदि मूल्यांकन करता हूँ तो कई हीरे बन जाते हैं, जिनकी चमक दमक वही है। उनमें न क्रांति के लिये आह्वान है, न ग्लोटीन के स्वप्न है, न उनमें स्त्री जाति का दुष्प्रचार है, न उसने अपनी चुनरी को पताका बनाया है और न समाज सुधार के लिये जोश में आई है। उसके भीतर अनोखी पीड़ा है जो उसकी आत्मा से झरने की तरह फूटकर निकलती है। यह सही है कि वह पीड़ा उसके समाज का प्रतिबिंब है, जिसमें स्त्री की नाराज़गी तथा अर्थहीनता है। उस पर सदैव प्रतिबंध और कठिनाई है, मानो किसी बुलबुल को पिंजरे में बन्द रखा गया है और कभी पुरुष उसे हाथ पर बिठाकर ललचाने वाला स्वादिष्ट खाना खिलाता है और कभी थोड़ी देर के लिये हवा में उड़ने के लिये छोड़कर उसकी डोरी खींच लेता है। बचपन में जब हम लोग बुलबुलों को फंसाते थे, तब किसी-किसी खींच के कारण बुलबुल की कमर घायल हो जाती थी और हम लोग उसे 'मुल्हियूं?' कहते थे। बहरहाल 'मुल्हियूं' हों या नहीं, स्त्री की डोरी सदैव पुरुष के हाथ में है। सिन्धी भाषा में यह लोकोक्ति भी है कि 'भले ही मारें भाई लोग, गले पर देकर लात।' यह लोकोक्ति माताएँ अपनी रोने वाली बेटियों को धैर्य बंधाने के लिये सुनाती थीं जब बड़े भाई उनसे मारपीट करते थे।

अतिया की एक संवेदनशील चित्रकारा वाली अंदरुनी आँख है। वह कुछ चित्र फ्रांसीसी चित्रकारा आंद्रे बर्त्यून की भांति खींच लेती है। उदाहरणस्वरूप 'सत्य की तलाश' और कुछ सैल्वीडार डाली की तरह जैसे 'प्रतिज्ञा' या 'पल का मौसम' में देखें क्या पंक्तियाँ हैं :

''रगों में रक्त ऐसे दौड़ता है
जैसे नदी के तट में दरार पड़ गई हो।''

'जाति' के तत्व की तलाश करने में उसमें रहस्यवाद की रेखा मिलती है। उसकी शायरी में एक रंग नहीं है और न उस पर डर तथा जुनून सवार है, जैसे फ्रेंच क्रांति उस टूटे दाँतों वाली श्रमिक स्त्री पर सवार थी, जो मेरी ऐन्टोनेट को ग्लोटीन के नीचे देखकर ठहाके मार रही थी।

'विश्वासघाती' कविता में उसकी यर्थाथता शिखर पर है :

''मैंने तलाक़ शुदा स्त्री को
ज़माने की नज़र से ध्वस्त होते,
कई बार देखा है,
इसलिये वर्षा से डरी हुई बिल्ली की तरह
घर के एक कोने में
तुम्हारे नाम के उपयोग में किफ़ायत की है मैंने।''

. . .

''स्वर्ग विश्वास से अधिक कुछ भी नहीं है
और नरक सुरैत के ठहाकों से भारी नहीं है।''

. . .

''लोगों की ठिठोलियों से
दया से भरी आँखों से दुष्कर
कोई पुलसुरात नहीं है।''

. . .

''मेरी ओर देखते हुए खुशी उसके सीने में,
हाथ में पकड़े कबूतर की भांति छटपटाने लगती है।''

यह है कला के नारे से निःस्पृह, जिसे देखकर मनोभाव हाथ में पकड़े हुए कबूतर की भांति छटपटाने लगते हैं। एक जगह कहती हैंः

''उससे पहले कि शक्ति मेरे अंदर से घृणा बनकर फूटे

आओ मिलकर वे दूरियाँ जड़ से उखाड़ कर फेंकें
और बराबरी के आधार पर समाज की चक्की बोयें।''

यह कामना है उसी स्त्री की, जो समझती है कि :

''शारीरिक मतभेद के अपराध में
ज़ंजीरों से बाँधी गई हूँ...''

और किसी पुरुष को संबोधित करते हुए कहती है।

''तेरा मुझसे मोह ऐसे
जैसे बिल्ली का छीछड़े से
उसे प्यार समझ लूँ
इतनी भोली नहीं हूँ!''

भारतीय सन्त रजनीश ने यदि अतिया को पढ़ा होता तो वह अपने संभोग वाले भाषण में कुछ इज़ाफ़ा, कुछ संशोधन करते।

अब मैं वे उदाहरण देकर स्मरण करवाता हूँ कि वे गद्यात्मक पद्य भी हैं परन्तु किसी उपन्यास, कहानी अथवा यात्रा वृत्तांत के कुछ अंश भी हो सकते हैं। उदाहरण स्वरूप मैं अमेरिका के नीग्रो उपन्यास तथा गद्यात्मक पद्य के दो अंश प्रस्तुत करता हूँ, जो उपन्यास अथवा शायरी दोनों में प्रयोग में लाये जा सकते थे।

नीग्रो उपन्यासकार विलियम डेम्बे ने एक उपन्यास में लिखा है :

''डोरस कमरे में ऐसे तेज़ी से आई, जैसे सूर्य उगने के बाद सूर्यमुखी धमाके से खिल जाते हैं। उसमें हमेशा की तरह नृत्य घर वाली आश्चर्यजनक प्राणशक्ति है, जो मुझे डरा देती है। प्रायः मेरे स्टूडियो में उसकी अचानक होती मुलाकातें देखकर, मैं इस बात पर लज्जित हो गया कि मैं लेखक हूँ! उसकी बवंडर जैसी टकसाल से निकले ताज़ा सिक्के जैसी उपस्थिति देखकर, मेरी आत्मा सिकुड़ कर संकीर्ण हो जाती है और एक पादरी की तरह पाजी और बुरी हालत के अहसास से घिर जाता हूँ। मेरा लेखक का मुखौटा गले तक ढीला होकर उतर आता है और किसी लेखाकार जैसे मेरी खोपड़ी पर गंभीर मुस्कराहट दिखाई देती है।''

क्या यह अंश डोरस के आगमन पर गद्यात्मक पद्य नहीं लगता? निम्नलिखित गद्यात्मक पद्य पढ़कर देखिये और सोचिये कि क्या यह किसी उपन्यास का अंश नहीं हो सकता।

''मैंने नदियों को जाना है।
मैंने इस संसार से भी प्राचीनतम नदियों को जाना है
नदियाँ, जो मेरी नसों में ख़ून के प्रवाह से भी प्राचीनतम हैं,
मैं फ़रात में नहाया हूँ जब दुनिया भी अभी भोर सी थी,
कांगो नदी के पास में मेरी झुग्गी थी और वह मुझे
लोरियाँ सुनाकर उनींदा बना देती थी,
मैंने नील नदी की ओर देखा और उसके पास में
शुंडाकार मीनारें बनाई,
मैंने मिसीसिपी नदी को गाते हुए देखा, जब मैं नीचे
की ओर न्यू आर्लीन्स की ओर गया था और मैंने
उसके मटमैले पानी को अरुणोदय में सुनहला होते देखा है।

मैंने कई नदियों को जाना है।
प्राचीन, धूल भरी, धूसरित नदियाँ
और मेरी आत्मा नदियों की तरह गहरी हो गई है।

(नीग्रो कवि, लैगिस्टन हुग्स)

उपरोक्त उपन्यास के अंश और गद्यात्मक पद्य में विषय की समानता नहीं है परन्तु उनका शायराना प्रभाव एक जैसा है जो अन्दर में नज़्म की अवस्था उत्पन्न करता है और उस का स्वर माधुर्य गिट्टार की आवाज़ की तरह काफ़ी समय तक मन में कंपित होता रहता है।

स्त्री जाति का आंदोलन 1960 के दशक के लगभग मध्य में यूनाइटेड स्टेट्स में फिर जाग्रत हुआ। उससे पहले वह फ्रेंच क्रांति, अमेरिकी क्रांति तथा रूसी क्रांति से प्रभावित हुआ और इतिहास के अलग-अलग दौर में नये रंग रूप से उभरा था। मरी वोल स्टोन क्राफ्ट (Mary Woll Stone Craft) ने स्त्रियों के अधिकारों के समर्थन में पहली पुस्तक (A Vindication of the right of women) लिखी। उस पुस्तक को अमेरिका के स्वतंत्रता वाली घोषणा ने उत्साहित किया और उसके बाद सम्पूर्ण देश के उद्योगों पर प्रभाव पड़ा, जिसने वहाँ के समाज का ढाँचा डांवाडोल कर दिया और इसी कारण खानदान उत्पादन की इकाई (Family as the basic unit of production) नहीं रहा।

श्रमिक स्त्रियाँ और श्रमिक पुरुष इतने पराये नहीं लगे। स्त्रियाँ घरों

में वस्तुएँ बनाने लगीं, जब तक तकनीक उन्हें बाहर श्रम करने के लिये खींच लाई। कपड़े के मिल अस्तित्व में आये और पाठशालाओं ने बच्चों की शिक्षा का भार अपने ऊपर लिया। श्रम का मूल्य रोकड़ में दिया गया और रोकड़ घर से बाहर श्रम कर प्राप्त की गई और जैसे समय बीता पुरुष का श्रम पर एकाधिकार समाप्त हो गया। आर्थिक आवश्यकता नई पद्धति के श्रम को बाज़ार में ले आई। सबने वहाँ अपने पालन-पोषण के लिये वेतन पर काम किया परन्तु साथ-साथ जो मध्यम वर्ग उभर रहा था, उसने स्त्री पूजा (Cult of the Lady) इतनी फैलाई कि इस समय पाकिस्तान के उच्च मध्यम वर्ग की भांति, स्त्री के लिये खाली समय, निरर्थक व्यय, झाड़ फूँक, ठाट-बाट, पति के प्रति मिथ्या अभियान और टर्रुपन का प्रतीक बन गई और इस बात ने मध्यम वर्ग की स्त्री को नौकरी से रोके रखा और उससे पुरुष के वही जागीरदारी दौर वाले संबंध रहे। स्त्री जाति वैसे औद्योगिक दौर में मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग का आन्दोलन नहीं रही है, जिसमें श्रमिक स्त्रियाँ अपनी लड़ाई स्वयं लड़ती रही हैं, विशेषकर उद्यमी आंदोलनों में प्रायः मध्यम वर्ग की निश्चिन्तता पर ईर्ष्या करती रही हैं और यह देख पाई हैं कि स्त्री का पुरुष पर आधारित रहना उसमें खून की कमी उत्पन्न कर उसे कमज़ोर कर देता है। कुछ भी हो परन्तु स्त्री जाति का आंदोलन अपने शिखर पर तब पहुँचा, जब मध्यम वर्ग एवं निम्न वर्ग की स्त्रियों ने वोट के अधिकार हेतु गठजोड़ किया। स्त्री के लिये प्रथम मताधिकार का विधेयक (National Suflearge) ब्रिटेन की संसद में प्रसिद्ध दार्शनिक स्टोअर्ट मिल ने 1867 ई. में प्रस्तुत किया। वह उस समय पास नहीं किया गया और फिर दो वर्षों बाद पास हुआ। वह प्रथम विधेयक था जिसने स्त्रियों को मताधिकार दिया। 1808 ई. से पूर्व अमीर वर्ग की कुछ स्त्रियाँ, तथा न्यूजर्सी (New Jersey) में ऐरिस्टोक्रेसी की कुछ स्त्रियाँ, कुछ विशेष परिस्थितियों में मध्यम दौर में यूरोप के कुछ देशों में वोट दे पाती थीं। कई दशकों के बाद मताधिकार को पूर्ण महत्व दिया गया। उन्नीसवीं शताब्दी में स्त्री जाति के आंदोलन का अधिक ज़ोर शिक्षा के अवसरों, नौकरियों तथा धंधों पर अधिकार तथा कानून की उन धाराओं को रद्द करने पर था; जो विवाहित स्त्रियों के अधिकारों को नकार रहे थे। हालांकि स्त्रियों ने फ्रेंच क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। फ्रांस की स्त्रियों के अधिकारों पर अधिक बहस नहीं हुई, हालांकि

1879 ई. में पहले राजनैतिक दल, जिसने स्त्रियों के अधिकारों की मांग की, वह फ्रांस की सोशल्सिट कांग्रेस थी। फ्रेंच स्त्रियाँ भी 1920 ई. के बाद महाविद्यालयों में प्रवेश ले पाईं और उन्हें मताधिकार 1944 ई. में दिया गया। इस देरी का कारण कैथोलिक चर्च का विरोध था।

जर्मन स्त्री जाति का संबंध सोशल्ज़िम के आन्दोलन से था। रोज़ा लक्समवर्ग (जिसका जीवन चरित्र मैंने ताज़ा पढ़ा है) कलेरा ज़ेटकिन और ऑगस्ट बेबल ने स्त्रियों के अधिकारों के संबंध में लिखा परन्तु उनका इस बात में विश्वास था कि क्रांति के सिवाय, स्त्रियों को बराबरी का अधिकार मिल नहीं पायेगा, इसलिये स्त्री जाति के आन्दोलन केवल सामान्य आमोद-प्रमोद थे। फिर भी वेमर गणराज्य में सोशलिस्ट और स्वछंद सोच वाले लोग 1919 ई. में स्त्रियों के लिये मताधिकार ले पाये। जर्मनी और स्कैंडनिटियोया में मताधिकार बिना किसी शोर गुल के मिल गया। 1902 ई. में फिनलैंड पहला देश था जिसने सभी स्त्रियों को मताधिकार दिया। नार्वे में 1913 ई. में दिया गया। सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्वीडन की समाज सुधारक स्त्रियाँ, एलेन तथा केली व अन्य थीं, जिन्होंने सरकार पर दबाव डाला कि माताओं, विवाहित चाहे अविवाहित स्त्रियों के बच्चों के पालन-पोषण के लिये क्षतिपूर्ति दी जाये। इस बात पर गर्भ निरोध ने कुछ सहायता की और कुछ जनता को माँ का सम्मान और कल्याणकारी राज्य की समझ दी। (यू.एस.एस.आर. के टूटने के बाद वहाँ के राजनीतिज्ञ, दार्शनिक तथा विचारक स्वीडन के कल्याणकारी राज्य को आदर्श समझ रहे हैं। केवल प्रजातंत्र इतना सार्थक नहीं है जब तक अनिवार्य परिणाम कल्याणकारी राज्य नहीं है।) ग्रेट ब्रिटेन की स्त्रियाँ तब तक स्त्री जाति के नेतृत्व हेतु आगे नहीं आयीं, जब तक उन्होंने अपनी पॉलिसी नहीं बदली।

पूरे चार दशकों तक वे संसद के बाहर इकट्ठी होती रहीं। जॉन स्टोअर्ट मिल की पुस्तक 'स्त्रियों की गुलामी' बाँटती रहीं। उसके बाद उन्होंने पाश्विक आचरण अपनाया तथा संसद पर हमला किया। मंत्रियों पर ताने कसे और मुंह बनाकर चिढ़ाया। शासकीय भवनों के विशाल दरवाज़ों के साथ अपने हाथों को हथकड़ियों से बाँधे रखा और तब तक नारे लगाती रहीं जब तक उन्हें घसीट कर नहीं हटाया गया। उन्होंने शासकीय भवनों को आग लगाई और जब पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर उन पर अत्याचार किया तब उन्होंने जेलों में भूख हड़तालें कीं, जिसके

कारण जनता की उनसे सहानभूति बढ़ी। प्रथम विश्वयुद्ध के कारण उन्होंने आन्दोलन स्थगित किया और उन में जो लड़ाका स्त्रियाँ थीं, वे युद्ध में सम्मिलित हुईं और युद्ध समाप्त होने के बाद तीस वर्षों से अधिक आयु वाली स्त्री की मान्यता के तौर पर मताधिकार दिया गया। उस की तुलना में अमेरिका में स्त्री जाति का आन्दोलन सम्मानजनक था। नावसा (The National American Women Sufgearge Associaton) ने अमेरिका के एक राज्य के बाद अन्य राज्य की ओर ध्यान दिया और इस प्रकार 1912 ई. तक बीस लाख स्त्रियों को मताधिकार मिला। उसके बाद उन्होंने कांग्रेस की कमेटी बनाई, ताकि उनके संबंध में संघीय संशोधन लाया जा सके। जिस दिन वड्रो विल्सन उद्घाटन के लिये आये उस दिन कांग्रेस ने आठ हज़ार स्त्रियों को इकट्ठा किया। जब उसने गलियाँ खाली देखीं तब उसने पूछा कि लोग कहाँ हैं? उसे उत्तर मिला ''वे स्त्रियों की सभा देख रहे हैं।'' आगामी आठ वर्षों तक राष्ट्रपति विल्सन और सफ़रागिस्ट (स्त्रियों के मताधिकार हेतु सक्रिय कार्यकर्ता) टकराव में आये। हालाँकि स्त्रियों को शिक्षा, रोज़गार तथा अलग पहचान मिली थी, लेकिन उन्हें मताधिकार नहीं दिया गया था। उस अधिकार के सिवाय स्त्रियों को बाह्य जगत् की ओर ध्यान देने के अवसर कम थे और वे घरेलू कार्यों में व्यस्त रहीं। इस बात को लेकर धार्मिक दृष्टिकोणवादियों से वाद-विवाद होता रहा कि मताधिकार लेकर स्त्रियाँ पहले की तरह घर-चलाती रहेंगी या नहीं और सफ़रागिस्ट कहते रहे कि स्त्रियों को अवसर प्रदान किये जायें ताकि वे संसार में पुरुषों से प्रतिस्पर्धा कर पायें, हालांकि वे यह भी कहते रहे कि स्त्रियों का वास्तविक स्थान उनका घर है।

जैसा कि मैंने पहले कहा कि 1960 ई. में स्त्री जाति का आन्दोलन यूनाइटेड स्टेट्स में पुनः उभरने लगा और थोड़े समय में पूरे पश्चिम में और उससे बाहर भी फैल गया। 1966 ई. में नेशनल आर्गनाइजेशन ऑफ वूमेन (NOW) स्थापित की गई, जिसने संघीय कानून के उस भाग का विरोध किया जिसके अनुसार स्त्री से भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जा रहा था। NOW का अन्य कई राष्ट्रीय संस्थाओं ने साथ दिया, जैसे कि :

(1) Women's Equality Action League (स्त्रियों को समानता हेतु संघ) (2) The National Women Political Caucus (स्त्रियों की राष्ट्रीय राजनैतिक गिरोह बंदी) (3) Fedrerally Employed Women (संघीय कार्यरत

स्त्रियां) और अन्य कई स्त्रियों के समूह उभरे, जिन्हें पेशे के आधार पर संगठित किया गया और उन्होंने भी आंदोलन में साथ दिया, उनकी कई मांगें थीं, जो किसी सीमा तक पूरी भी की गईं। 1972 से 1974 ई. तक अमेरिकी कांग्रेस ने ऐसे कानून पारित किये जिनमें स्त्रियों के कई अधिकार सुरक्षित किये गये। 1972 ई. में कांग्रेस ने समान अधिकार संशोधन (Equal Rights Amendment) को स्वीकृति दी। यह प्रस्ताव अर्ध शताब्दी से उसके पास लंबित पड़ा था और उसमें यह बिल्कुल स्पष्ट किया गया था कि सरकार, लिंग के आधार पर अधिकारों की समानता पर किसी भी परिस्थिति में छेड़छाड़ नहीं कर पायेगी। 1972 ई. में यू.एस. के उच्चतम न्यायालय ने गर्भपात की अनुमति दे दी। कई स्त्रियाँ महत्वपूर्ण पदों के लिय चयनित की गईं। यूरोप के नवयुवक यू.एस.ए. से बहुत प्रभावित हुए। डेनमार्क, नार्वे, स्वीडन, इंगेंडिन, नीदरलैंड में कई स्त्रियों के आन्दोलन अस्तित्व में आये हैं और उनमें गृहणियाँ और विवाहित स्त्रियाँ भी हैं तो नवविवाहित स्त्रियाँ भी हैं।

मैंने साम्यवादी (Communist) स्त्रियों के संबंध में कुछ नहीं लिखा है, क्योंकि वे शासन और उनके कानून ऊपर नीचे हो चुके हैं। ऐसा दिखता है वहाँ स्त्रियाँ पुरुष से दुर्व्यवहार करने में समान रूप से भागीदारी थीं। भारत तथा पाकिस्तान में स्त्री से जो क्रेज़ की जाती है, वह हम सब जानते हैं। आश्चर्य इस बात पर है कि अतिया, जो सिन्ध के वातावरण में पली-बढ़ी है और जिसे पश्चिम के उपरोक्त आंदोलनों की कोई जानकारी नहीं है, वह समाज से इतना विद्रोह करने पर आमादा है। वाकई दैवीय देन एक डग में शताब्दियाँ लाँघ जाती है और उसके लिये देशों की सीमाएँ नहीं होती।

मूल लेखक : शेख़ अयाज़
हिन्दी अनुवाद : खीमन यू. मूलाणी

कविता चीख़ तो सकती है

पाकिस्तानी शायरा परवीन शाकिर का एक शेर याद आ रहा है, शब्द शायद अलग हों लेकिन भाव कुछ इस तरह का है :

मैं सच कहूँगी फिर भी हार जाऊँगी
वो झूठ बोलेगा और लाजवाब कर देगा।

परवीन शाकिर का शेर पुरुष प्रधान समाज में सदियों से चला आ रहा नारी के दमन को वाचा देता है। नारी विमर्श की कई कविताएँ हर भाषा में आ रही हैं। हर कविता की अपनी गरिमा होती है, छू जाती है, किंतु कई ऐसी भी होती हैं जिनमें अनुभव कविता बनते बनते रह जाता है। कभी ऐसा भी अनुभव होता है कि कहीं नारी विमर्श की कविताएँ लिखना फैशन तो नहीं बन गया है। ऐसे वातावरण में जब नसों पर झेली हुई, धड़कती कविता सामने आती है तो मन में कोई वाद्य बज उठता है। ऐसा ही अनुभव मुझे हुआ जब मैंने एक और सिंध, पाकिस्तान की कवियित्री अतिया दाऊद का संग्रह ''एक थका हुआ सच'' के पन्नों को पलटा, जो दरअसल उसकी सिंधी कविता संग्रह 'अणपूरी चादर' का देवी नागराणी द्वारा किया हुआ सक्षम हिंदी अनुवाद है। पूरा संग्रह अभिव्यक्ति की सचोटता के कारण पाठक के वजूद को सराबोर करता एक अनोखे भावजगत की सैर कराता है, और रेखांकित करने वाली विशिष्टता यह है कि कहीं भी नारी जीवन की विषमताओं के बीच से गुजरते हुए भाविकों के अंतर में नारी के लिए सहानुभूति नहीं बल्कि सह-अनुभूति जगाता है।

अतिया दाऊद ने नारी जीवन के प्रत्येक रूप को इतिहास की ऐनक से परखते हुए ऐनक पर रंगीन कांच नहीं लगाए, बिल्कुल पारदर्शिक सफेद, साफ शीशे से वह नारी की हर स्थिति का निरीक्षण करती है, जो उसकी कविता को विश्वसनीय बनाती है। लेकिन इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि उसकी कविताएँ केवल स्थितियों की फोटोग्राफी है। ऐसा हो तो उसकी कविताएँ, कविताएँ नहीं बनतीं, विवरण मात्र बनकर रह जातीं। अतिया उनको अपना एक कलात्मक स्पर्श देती है जिसमें नावीन्य एक तरफ तो दूसरी ओर अभिव्यक्ति की सचोटता है, जिसका हिंदी

अनुवाद भी उतना ही सचोट बन पड़ा है, जिसका श्रेय एक बार फिर देवी नागराणी को जाता है :

मैं सदियों से सहरा से परिचित हूँ
और जानती हूँ
यहाँ छाँव का वजूद नहीं होता

(पृ. 37)

और तीसरी ओर अतिया की परिपक्व सोच है जो भाषागत औचित्य के साथ मिलकर कविता को अतिरिक्त प्रभावशाली बनाती है :

रात को जुगनू को पकड़ कर
बोतल में बंद करके
सुबह उसे परखने का खेल
मैंने ख़त्म कर दिया है
मेरी कहानी जहाँ ख़त्म हुई
वहीं मेरी सोच का सफर शुरू हुआ है
पहला शब्द ''आगूं-आगूं'' उच्चारा था
तो भीतर की सारी पीड़ा अभिव्यक्त की
आज भाषा पर दक्षता हासिल करने के बावजूद
गूँगी बनी हुई हूँ
तुम्हारा कशकोल (भिक्षा पात्र) देखकर
अपनी मुफलिसी का अहसास होता है
बेशक देने वाले से लेने वाले की
झोली वसीह होते है
यह राज मुझे समंदर ने बताया है

(पृ. 40)

यहाँ ''बेशक देनेवाले से लेने वाले की / झोली वसीह होती है / यह राज़ मुझे समंदर ने बताया है'' अभिव्यक्ति अतिया की कल्पना की समृद्धता की ओर इशारा करती है। पुरुष समाज ने नारी को इन्सान के स्थान पर उसे बीवी, वेश्या, महबूबा, रखैल बना डाला, उसे अलग अलग कोणों से देखने की आदत डाल दी, कभी गिद्ध की नजर से गोश्त का ढेर, तो कभी बिल्ली की नजर से ख़ून का तालाब समझ लिया, कभी ऐसा नहीं हुआ कि पुरुष समंदर के दूसरे किनारे को छू ले, जहाँ उसके अंदर जज़्ब होने के लिए स्त्री कतरे (बूँद) के रूप में मौजूद होती है।

शायद इसी कारण आज की स्त्री पूरे समाज से विद्रोह की मुद्रा में है। अतिया की इस संग्रह की सशक्त कविताओं में ''अपनी बेटी के नाम'' ऐसी ही एक कविता है जो शताब्दियों से नारी के साथ हुए असीम अन्याय के जलते लावा की तरह फूट पड़ी है :

अगर तुम्हें 'कारी' कहकर मार दें
मर जाना, प्यार जरूर करना!
शराफत के शोकेस में
नक़ाब ओढ़कर मत बैठना
प्यार जरूर करना!

(पृ. 33)

पाकिस्तान हो या भारत, 'कारी' (honour killing) के क़िस्से अप्रचलित नहीं हैं। कई लड़कियाँ/स्त्रियाँ पगड़ी, मूँछ, टोपी की शान बचाने के नाम पर कुर्बान कर दी जाती हैं, बेरहमी से मार दी जाती हैं। जब अतिया की उपर्युक्त कविता सिंधी में छपी थी तो समाज के कई पुलिस वालों को यह कविता चरित्रहीनता का घिनौना उदाहरण लगी थी। अतिया को अवश्य रूढ़िगत समाज के बीच रहते परेशानी झेलनी पड़ी, लेकिन उसने साहस के साथ कविता को अपने से जोड़े रखा। विद्रोह का यह रूप आकस्मिक नहीं है, युगों से अंदर सुलग रही चिंगारी को केवल थोड़ी सी हवा लगी है, आज की स्त्री माँ से यह कहते नहीं हिचकती :

अम्मा, रस्मों रिवाजों के धागे से बुनी
तार-तार चुनर मुझसे वापस ले ले
मैं तो पैबंद लगाकर थक गई कि अपनी बेटी को कैसे
पेश करूँगी
अम्मा बंद दरवाजा, जिसकी कुंडी
तुम्हें भीतर से बंद करने करने के लिए कहा गया है
खोल दे, नहीं तो मेरा क़द
इतना लंबा हो गया है
कि वहाँ तक पहुंच सकती हूँ...
चादर के नक़ाबों और बुर्क़े की जाली से
दुनिया को देखना नहीं चाहती...

(पृ. 51-52)

इसी कविता के अंतिम भाग में नारी की अपना बलिदान देने की सहज वृति दृष्टव्य है, अपनी आने वाली नस्लों के हित के लिए :

> बाहर वसीह आसमान के तले, खुली हवा में
> अगर मैं तुम्हें नजर न भी आई
> तो मेरी बेटी या नातिन की
> आजाद आवाज की गूँज तुम जरूर सुनोगी

(पृ. 52)

देखा जाए तो इस तरह की कविताएँ अगर थोड़ा भी काव्यात्मकता से हटें तो नारे का रूप ले लेती हैं। और एक नारा भरपूर फेफड़ों से निकली आवाज के बावजूद केवल नारा ही कहलाएगा, कविता नहीं। लेकिन यह अतिया दाऊद की संयमित भाषा प्रयोग ही तथा देवी नागराणी द्वारा उसका दक्षतापूर्ण अनुवाद है, जो इन कविताओं को काव्य-रूप दे सकने में सक्षम हो सका है। इस प्रकार की कवित्व से ओतप्रोत कविताएँ आंदोलन बनने की क्षमता नारे से ज़्यादा रखती हैं--एक उदास सुर के साथ इनमें विद्रोह का ऐसा भाव है जो हृदय से निकला है, बाहर से थोपा हुआ नहीं है, जिया हुआ सच है, भले वह थका हुआ हो, लेकिन हारा हुआ नहीं है। इन कविताओं में लिए हुए हर श्वास की तपन है, ऐसी गरमाइश है जिसके आगे पहाड़ मोम बन जाते हैं।

लेकिन ऐसा नहीं है कि अतिया का समस्त संग्रह विद्रोह की बात करता है। वह केवल स्त्री के समान अधिकार को रेखांकित करना चाहती है, स्त्री-सुलभ प्रेम के स्रोत उसके अंतर में भी कूट कूट भरे हैं, वह केवल स्त्री सम्मान की बात करती है :

> मेरे महबूब, मुझे उनसे मुहब्बत है
> पर मैं, तुम्हारे आँगन का कुआँ बनना नहीं चाहती
> जो तुम्हारी प्यास का मोहताज हो
> जितना पानी उसमें से निकले तो शफाफ
> न खींचो तो बासी हो जाए
> मैं बादल की तरह बरसना चाहती हूँ
> मेरा अंतर तुम्हारे लिए तरसता है
> पर यह नाता जो बंदरिया और

> मदारी के बीच होता है
> मैं वो नहीं चाहती

(पृ. 57)

'मैं बादल की तरह बरसना चाहती हूँ', नारी हृदय की क्या बात करें, उसका हृदय तो ऐसा ही होता है, वह फैसला करती है कि मैं उससे बात नहीं करूँगी, और फिर उसके फोन कॉल का इन्तजार करती है। इसी जमीन पर लिखी एक दूसरी कविता 'प्यार की सरहदें' (पृ. 59) भी ध्यान आकर्षित करती है। आज की स्त्री अपने को इतना सशक्त करना चाहती है कि उसे किसी दीवार के पीछे बंद करना उतना ही असंभव हो जितना धूप को पिंजरे में बंद करना हो।

स्त्री की विडम्बना यह है कि उसे केवल पुरुष समाज से जूझना नहीं होता, स्त्री जाति से भी होड़ लगी रहती है। सौतन एक ऐसी ही विडम्बना है, जिसमें स्त्री ही स्त्री की शत्रु है :

> घर का एक कोना और तुम्हारा नाम
> इस्तेमाल करने की मेहरबानी ली है
> जन्नत क्या है? जहनुम क्या है?
> मैं नहीं जानती, पर यकीन है कि जन्नत
> विश्वास से बढ़कर नहीं है
> और जहन्नुम सौत के कहकहों से भारी नहीं

(पृ. 62)

हम मानते हैं कि कविता हथियार नहीं बन सकती, लेकिन कविता हस्तक्षेप अवश्य कर सकती है, वह चीख़कर ध्यान आकर्षित तो कर ही सकती है। अतिया की भाव-शैली कुछ ऐसी भाषा का चयन कर सकी है जिसमें अनुभव-जो कि उसने जिया है, जो अपने स्व को तथा जीवन को अच्छी तरह समझता है—प्रवाहित होता है, जिसको प्रवाहमय देवी नागराणी के अनुवाद ने भी बनाया है, एक ताजगी भरे हवा के झोंके की तरह। कहना चाहूँगा कि मानव संवेदनशीलता तो वही रहती है, केवल भाषा बदलती है। और भाषा सरल सहज हो तो रचनाकार की कृति कई आकाश छू लेती है। हाँ, यहाँ आँसू दिखते हैं, आँसू भावों के द्योतक होते हैं, और भाव जीवन के चिह्न होते हैं। शीशे टूटते हैं, लेकिन टूटे शीशे ही तो रोशनी के कई अक्स पैदा करने की क्षमता रखते हैं।

वासदेव मोही

आईने के सामने एक थका हुआ सच

महिलाओं के सशक्तीकरण के लिये हम साहित्य की कौन-सी मशाल लेकर चलें ताकि मानवता अंधेरे से उजाले में आ जाए?

देश की प्रगति में महिलाओं की उतनी ही भागीदारी है जितनी पुरुषों की। स्वतंत्रता के बाद महिला राजनैतिक, सामाजिक, शिक्षण व रोजगार के हर क्षेत्र में तेज़ी से भागीदारी ले रही है। यह नारी विमर्ष का असर है या नारी जागरूकता का, तय कर पाना मुश्किल है, पर एक बात निश्चित है कि शिक्षा की रोशनी में नारी अपने आपको जानने, पहचानने लगी है। शक्ति प्रतिभा एवं समान अधिकार उसका जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे पाने के लिये उसका हर क़दम अब आगे और आगे बढ़ रहा है।

कल और आज की नारी में ज़मीन-आसमान का फ़र्क है। आज नारी अपनी सोच को ज़बान देने में कामयाब होती जा रही है, अपने भले-बुरे की पहचान रखते हुए अपनी सुरक्षा, आत्मनिर्भरता व प्रगति की हर दिशा में अपना अधिकार पाने की राहें तलाश रही है।

माना कि औरत का असली स्थान घर में है, पर उसकी परीधियों की पहचान दीवारें तय नहीं कर पातीं। ईश्वरीय प्रतिभा एक फलांग में सदियाँ लाँघ जाती है और जहां मुल्कों की सरहदें नहीं होतीं औरत वहीं अपने वजूद की खुशबू हवाओं में बिखेर देती है यह कहते हुए :

मैं तुमसे ज़हीन हूँ
मैं अदब की अल्ट्रा साउंड मशीन हूँ
तुम्हारे भीतर का आदमी मुझसे छिपा नहीं है।

आँखों से आँखें मिलाकर कहने की तौफ़ीक रखने वाली यह बाग़ी शायरा अतिया दाऊद, इन्सानी ज़हन की नाआसूदगी से होकर उभरती तंग दिली और औरत की मौजूदगी को रद्द करने वाली हर सम्भावना से बगावत करते हुए अपने आसपास की गिरफ्त से खुद को आज़ाद कराने की छटपटाहट में, हर उस नाजायज़ नज़रिये को रद्द करते हुए तेज़ाबी

तेवरों में अपनी महसूस की हुई, जी हुई, भोगी हुई जिन्दगी की सोच को अभिव्यक्त करते हुए कहती है—''नज़रिये सब नज़र का फरेब है और आखिर में वे सब बयाबान में भटक जाते हैं :

और फिर—

अंधेरे के गर्भ से रोशनी का जन्म हुआ! एक सच, नंगा सच सामने आता है सिन्ध की सुपुत्री की जबानी जो समाज की कुरुप व्यवस्था का जिया हुआ सच सामने रखती है—

दुनिया में आँख खोली तो मुझे बताया गया
समाज जंगल है, घर एक पनाह है
मर्द उसका मालिक और औरत उनकी किरायेदार
भाड़ा वह वफ़ा की सूरत में अदा करती है!

(क : 26)

औरत का परिचय खुद से भी शायद अधूरा है। कहीं न कहीं, किसी न किसी मोड़ पर उसे खुद से जोड़ती हुई कोई कड़ी मिल जाती है जो उसकी पहचान के विस्तार को वसीह करती है। अतिया दाऊद के सिन्धी काव्य संग्रह 'अणपूरी चादर' की प्रति जब मुझे श्री नंद जवेरी के घर पर हासिल हुई, तो मैं अपने पढ़ने की लालसा का मोह भंग न कर पाई। घर आकर जब पढ़ने की पहल की, तो शेख़ अयाज़ के पुरो वाक्य सामने थे—'अतिया दाऊद के काव्य पर उर्दू शायरा सारा शगुफ्ता की सोच का असर दिखाई देता है।' यह सच है, मैंने भी उनकी पुस्तक 'आँखें' एक नहीं, कई बार पढ़ी है और हर बार अपने अन्दर एक धधकते हुए सच का ऐलान सुनती हूँ, अपने ही किसी कटे हुए हिस्से का, जो 'अमीबा' की तरह अपने आप में एक सम्पूर्ण वजूद बन गया!

शेख़ अयाज़ की लिखी प्रस्तावना के कुछ अंश पढ़कर मुतासिर होते हुए इस कृति का हिन्दी अनुवाद अतिया दाऊद की अनुमति से 'एक थका हुआ सच' के रूप में आपके सामने है जिसका एक अंश कहता है:

आँखों में झूठा प्यार सजाकर
मेरे सामने आओ
कानों में प्यार भरी झूठी सरगोशियाँ करो

मुनाफ़क़त की ज़जीरें
कंगन बनाकर मुझे पहनाओ
इतनी मक्कारी से मुझे प्यार करो
कि रूह बर्दाश्त न कर पाए
और तड़प कर मेरे वजूद से आज़ाद हो जाये! (क-7)

शब्दों की ऐसी तासीर समुद्र के सीने पर सोई हुई लहरों में तहलका मचा सकती है। स्त्री की अधीनस्थ अवस्था जैसे नियति का वरदान है। पर अब उस कवच के भीतर पनपती स्त्री 'स्व' विकास के लिये, स्वतंत्रता के लिये, स्व अधिकार के लिये यदि समाज के सामने, परिवार व देश के सामने खड़ी हो तो यह पुरुष प्रधान समाज उसे सहज स्वीकार नहीं पाता। उसका वजूद कंटीली झाड़ियों में फंसे उस फूल की तरह है जो अपने आसपास के कंटकों से रक्तरंजित होता रहता है।

सारा शगुफ्ता की पुस्तक 'आँखें' की प्रस्तावना लिखते हुए अमृता प्रीतम ने लिखा है—'कमबख़्त कहा करती थी—ऐ खुदा मैं बहुत कड़वी हूँ, पर तेरी शराब हूँ। और अब मैं उसकी नज़्मों को और उसके ख़तों को पढ़ते-पढ़ते ख़ुदा के शराब का एक-एक घूँट पी रही हूँ...!'

अमृता प्रीतम ने यह संग्रह, सारा शगुप्ता की मौत के बाद खुद प्रकाशित करवाया था। आगाज़ के अंत में वही छटपटाता दर्द आहें भरते हुए लिखता है : कमबख़्त ने कहा था—''मैंने पगडंडियों का पैरहन पहन लिया है।''—लेकिन अब किससे पूछूँ कि उसने यह पैरहन क्यों बदल लिया है? जानती हूँ कि ज़मीन की पगडंडियों का पैरहन बहुत कांटेदार था और उसने आसमान की पगडंडियों का पैरहन पहन लिया, लेकिन... और इस लेकिन के आगे कोई लफ़्ज़ नहीं है, सिर्फ आँख के आँसू हैं...।'

इस संग्रह के सिन्धी प्रारूप में अतिया दाऊद की रचनात्मक क्षेणी को पैनी नज़र से देखते हुए, पढ़ते हुए, ज़ब्त करते हुए पाया कि अतिया के पास तीक्ष्ण नज़र है जो अलौकिक सौंदर्य भेदती हुई कल्पना और यथार्थ को जोड़ पाने में सक्षम है। उसकी दूरदर्शिता सदियों की कोख से होती हुई आज भी नारी के हर संकल्प व संभावना की कसौटी पर खरी उतरती है।

इन काव्य मणियों का अनुवाद करते हुए मैंने भरपूर कोशिश की है कि लेखिका की भावनात्मक अभिव्यक्ति में समाई सोच, समझ और सौंदर्य भाव को हिन्दी भाषा में उसी नगीना-साज़ी के साथ सामने लाऊँ। इसी वजह से कहीं-कहीं उर्दू-सिन्धी के लफ़्ज़ों को बरकरार रखा है ताकि भावनाओं की खुशबू बनी रहे। आसान कुछ भी नहीं होता और वह भी भाषाई परीधियाँ फलांघते हुए लगता है गहरे पानी में उतरकर मोती ढूंढ लाने हैं—उन्हीं से एक लड़ी पिरोकर 'एक थका हुआ सच' आपके सामने ले आई हूँ।

नारी अपने अस्तित्व की स्थापना चाहती है, अपने होने न होने के अस्तित्व को अंजाम देना चाहती है। उन वादों की तक़रीरों और तहरीरों से अब वह बहलाई नहीं जा सकती। वह प्रत्यक्ष प्रमाण चाहती है। अपने होने का, जिन्दा रहने के हक़ का, और उन हक़ों के इस्तेमाल का—

'तुम्हारे वादे जो दावा करते थे कि
नारी खानदान का ग़ुरूर है, घर की मर्यादा है
आँगन की शान, बच्चों की माँ और
तुम्हारे जीवन का सुरूर है, सबके सब...
हाँ! सबके के सब झूठे साबित हुए हैं।''

मर्द होने के नशे में पुरुष को औरत फ़क़त एक हाड़-मांस का तन मात्र दिखाई देती है उसे, जिसे वह अपनी मर्ज़ी से जब चाहे, खेल सकता है, तोड़-मरोड़ सकता है।

पर अब ऐसा नहीं, अपने अतीत को दफन करते हुए नारी कह उठती है—'तुम मोड़ सकते थे, पर अब नहीं।' अब उसे अपने जीवन पर नियंत्रण है। वह जीने का मंत्र जान चुकी है, अपनी खुद की पहचान पा चुकी है। इसीलिये अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए कहती है :

'मेरे महबूब, मुझे तुमसे मुहब्बत है
पर मैं तुम्हारी आँगन का कुआँ बनना नहीं चाहती,
जो तुम्हारी प्यास का मोहताज हो। (क-22)

अपने हिस्से की जंग लड़ने की हिम्मत बनाये रखने की चाह में अपनी पहचान के अंकुश को मील का पत्थर बनाना चाहती है, ताकि जब भी आने वाली सदियों के पथिक वहाँ से गुज़रें, उन्हें वह याद दिलाता रहे

कि नारी मात्र पत्थर नहीं, बुत नहीं, जिसे तोड़ा-मरोड़ा जा सके, न ही वह किसी मंदिर में स्थापित की जाने वाली संगमरमर की मूर्ति है जिसके सामने धूप-दीप-आरती घुमाई जाए। वह प्रसाद में बंटने वाली चीज़ नहीं!

चाणक्य ने भी स्त्री के विषय में लिखा है—'हे स्त्री, तू स्त्री है इसीलिये तेरी ओर मैं अधिक अपेक्षा से देखता हूँ। इस संसार को बदलने का सामर्थ्य मात्र तुझमें है। अपने सामर्थ्य को पहचान! अगर स्थितियाँ स्वीकार नहीं हैं तो उन्हें बदल। जिसके अंदर जितना सच होगा, उसे उतना ही सामर्थ्य प्राप्त होगा।'

और शायद इसी सामर्थ्य को परिभाषित करते हुए अतिया दाऊद ने लिखा है—

'मुझे गोश्त की थाली समझकर
चील की तरह झपटे मारो
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं (क-12)

हर औरत यह अधिकार चाहती है कि वह अपने जीवन की नायिका बने, शिकार नहीं...। आज की जागृत नारी शिक्षा की रोशनी में अपने आपको तराश रही है, अपनी पहचान को ज़ाहिर करने के लिये अपनी प्रतिभा के इन्द्रधनुषी रंग अपनी अभिव्यक्ति में ज़ाहिर कर रही है। ऐसा ही एक रंग अतिया दाऊद की काव्य प्रतिभा दर्शा रही है—

'मैं बीवी हूँ, मैं वेश्या हूँ, महबूबा हूँ, रखैल हूँ
तुम्हारे लिये हर रूप में एक नया राज़ हूँ
तुम जिस कोण से भी देखोगे
तुम्हें उसी स्वरूप में नज़र आऊँगी
गिद्ध की नज़र से देखोगे तो गोश्त का ढेर हूँ...। (क-10)

ऐसी एक नहीं, अनेक कविताएँ पढ़ते हुए सोच भी ठिठक कर रुक जाती है कि कौन-सी पीड़ा के ज्वालामुखी के पिघले द्रव्य में कलम डुबोकर सिन्ध की इस कवयित्री ने औरत के दर्द की परतों के भीतर धंसकर, उसकी हर इच्छा, अनिच्छा को ज़बान दी है। जैसे एक जौहरी की दुकान में, रोशनी को देखते हुए आँखें चुंधिया जाती हैं, ऐसे ही अतिया दाऊद की हर नज्म एक आबदार मोती का आभास करवाती

है। उसकी विचारधारा एक धारावाहिक अभिव्यक्ति में एक क्रांति ले आने का शौर्य रखती है। उनकी ज़हनी सोच जैसे हर बड़े शहर में सहरा बनकर बस गई है—

मैं जानती हूँ सहरा को सदियों से
यहाँ छाँव का वजूद नहीं होता!

और यह सोच जब शब्दों का लिबास पहनकर नारी जाति का संदेश पहुँचाने की ख़ातिर जन-जन के बीच पहुँचती है तो अतिया जी की बुलंद आवाज़ में—

जो भी सुनता है
चौंक उठता है
आज एक लड़की ने
सदके की कुरबान गाह पर
सर टिकाने से इन्कार किया है
उसने जीना चाहा है, पर
लोग तन्ज़ के पत्थर लेकर
संगसार करने आए हैं। (क-19)

यह समाज आज रिश्तों का जंगल बना हुआ है। अपने-अपने हिस्से की लड़ाई लड़ते हुए, रिश्तेदारियाँ निभाते हुए इन्सान भीतर ही कहीं न कहीं टूटता-बिखरता जा रहा है। आर्दशों की चौखट पर सभी स्वाहा हो रहे हैं...मेरी सोच के ताने बाने भी ऐसे ही कुछ उलझे धागों से बुनी अभिव्यक्ति में कह रहे हैं—

रिश्तों की बुनियाद
सुविधा पर रखी गई हो, तो
रिश्ते अपंग हो जाते हैं
अर्थ सुविधा के लिये स्थापित हों, तो
रिश्ते लालच की लाली में रंग जाते हैं
और अगर...
रिश्ते, निभाने की नींव पर टिकें हों, तो
जीवन मालामाल हो जाता है...!

वाक़ई वक़्त की पगडंडियों पर ये निशान नक्शे-पा बनकर आने वाली

पीढ़ियों की राहें रौशन करेंगे। पढ़ते हुए आभास होता है कि यह हक़ीक़त है या ख़यालों की जन्नत—'जो पल की उड़ान' में हासिल होती है :

'बादल बयाबान में बरस रहे हैं
सहरा में दरिया उमड़ पड़ा है
जलती आग में फूल खिल उठे हैं
वीराने में सुर खनक उठे हैं
किसने वजूद को सलीब से उतारा है
आँखों में सपने सजने लगे हैं
भीतर की प्यास कैसे सैराब हो गई
कैसे जाम लबों तक आ पहुँचे
आग बदन को जलाती क्यों नहीं?
यह कौतुक क्योंकर होने लगा है—
एक लम्हें ने मुझे कहाँ पहुँचा दिया है
यह हक़ीकत है या ख़्यालों की जन्नत
इतनी तेज़ उड़ान तो हवा भरती है
या फिर
आमीन (क-5)

बस इतना ही...सफ़र आगे और है, चलिये इन वक़्त की पगडंडियों पर साथ-साथ चलते हैं।

इस संग्रह का अनुवाद अतिया दाऊद की अनुमति के सिवा हो नहीं सकता था। मैं तहे दिल से उनकी आभारी हूँ जो मुझे अपनी स्वीकृति दी।

इस संग्रह में शामिल शेख़ अयाज़ की प्रस्तावना का हिन्दी अनुवाद भोपाल के हस्ताक्षर अदीब श्री खेमन मूलाणी ने किया है। इस सहकार के लिये मैं तहे दिल से उनकी आभारी हूँ।

आपकी
देवी नागरानी

अपनी बेटी के नाम

अगर तुम्हें 'कारी' कहकर मार दें
मर जाना, प्यार ज़रूर करना!
शराफ़त के शोकेस में
नक़ाब ओढ़कर मत बैठना,
प्यार ज़रूर करना!

प्यासी ख्वाहिशों के रेगिस्तान में
बबूल बनकर मत रहना
प्यार ज़रूर करना!
अगर किसी की याद हौले-हौले
मन में तुम्हारे आती है
मुस्करा देना
प्यार ज़रूर करना!

वे क्या करेंगे?
तुम्हें फक़त संगसार करेंगे
जीवन के पलों का लुत्फ़ लेना
प्यार ज़रूर करना!
तुम्हारे प्यार को गुनाह भी कहा जायेगा
तो क्या हुआ? ...सह लेना।
प्यार ज़रूर करना!

कारीकलंकित

सफ़र

मेरी जिन्दगी का सफ़र
घर से क़ब्रस्तान तक
लाश की तरह बाप-भाई,
बेटे और शौहर के
कांधों पर मैंने बिताया है
मज़हब का स्नान देकर
रस्मों का कफ़न पहनाकर
बेख़बरी की कब्र में दफ़नाई गई हूँ!

ख़ामोशी का शोर

भीड़ में घिरी हुई हूँ मैं
पर हर तरफ़ खामोशी सदाएँ दे रही है
इन्सान जैसे पत्थरों की मूर्तियाँ
मैं उनकी ओर देखती हूँ
पर पथरीली नज़रें देखना न जानें
पत्थर वासियों के देश में
मूर्तियों के मंदिर में
मैंने कितने घंटे बजाए
पर हर तरफ़ खामोशी सदाएँ दे रही है
मेरी सदाएँ गूँज बनकर हवा में तैर रही हैं
दिल की धड़कन चीख रही है
सांसों की सर-सर दुहाई दे रही है
शिराओं में खून यूँ दौड़ रहा है
जैसे दरिया में गाढ़ा बह रहा हो
वजूद के भीतर भी यह शोर
अब तो हवा में घुल मिल गया है
ख़ामोशी का यह शोर
मुझे भी कहीं बहरा न कर दे
हर तरफ़ छाई बेहसी की फिज़ा
मुझे पत्थर न बना दे!

बहसी बिना दबाव के

एक पल का मातम

साथी अलविदा!
यहाँ से हो गए जुदा
तुम्हारे और मेरे रास्ते
दोस्त, मेरा हाथ न छोड़ो
यह कैसे मुमकिन है, कि
तुम और मैं विपरीत दिशाओं में जाएँ
और मेरा हाथ तुम्हारे हाथ में रहे?
इतनी लम्बी तो मेरी बांह नहीं!
मैं पीछे मुड़कर कब तक तुम्हें देखती रहूँगी
तेरे-मेरे सफ़र में पहाड़ भी तो आएँगे
पहाड़ को चीरकर तुम तक पहुँचे
इतनी तेज़ तो मेरी नज़र नहीं!
तुम्हें कब तक मैं पुकारूँगी
कैसे पहुँचेगी तुम तक मेरी आवाज़
गूँज बनकर मेरे पास लौट आएगी,
हवा की लहरों पर तो मेरा इख़्तियार नहीं
इस पल की यातना से कौन इन्कार करेगा
मुझे इस पल का मातम मनाने दो
आने वाले पल में यह पल
एक दौर बन जायेगा
एक पल से दूसरे पल तक
तुम्हारे और मेरे बीच में
एक दौर का फासला होगा
वक़्त की धारा को वापस मोड़ना मेरे बस में तो नहीं!

सच की तलाश में

इस सहरा में मेरा सफ़र
न जाने कितनी सदियों से जारी है
सच का सलीब पीठ पर उठाए
फरेब से सजी धरती पर चलती रही
एक आँख कहती है सब सच है
एक आँख कहती है सब झूठ है
मैं सच और झूठ के बीच में पेन्ड्युलम की तरह
हरकत करती रही
जानती हूँ कि वह दूर का पानी है
दर असल मरीचिका है
फिर भी दिल में उम्मीद लिये
उसी ओर दौड़ती रही
जानती हूँ कि सूरज की रोशनी में
हमसफ़र, जो साथ हैं
वे मेरी परछाइयाँ हैं
साथ को सच समझकर
हर रोज़ उनके साथ चलती रही
एक आँख कहती है सब सच है
एक आँख कहती है सब झूठ है!

लम्हे की परवाज़

मैं तन्हाइयों की मुसाफिर
असुवर शिकंजों का मोहरा
जलते सूरज तले
तपती रेत पर चलने की आदी
मैं सदियों से सहरा से परीचित हूँ
और जानती हूँ
यहाँ छाँव का वजूद नहीं होता
पर मैं यह धोखा कैसे खा बैठी
एक पल में मैं कहाँ आ पहुँची
यह हक़ीक़त है या ख़्यालों की जन्नत
बादल बयाबान में बरस रहे हैं
सहरा में दरिया उमड़ पड़ा है
जलती आग में फूल खिल उठे हैं
वीराने में सुर खनक उठे हैं
किसने वजूद को सलीब से उतारा है
आँखों में सपने सृजन होने लगे हैं
भीतर की प्यास कैसे सैराब हो गई
कैसे जाम लबों तक आ पहुँचे
आग बदन को जलाती क्यों नहीं?
यह कौतुक किस तरह होने लगे
एक पल ने मुझे कहाँ पहुँचाया है
यह हक़ीक़त है या ख़्यालों की जन्नत
इतनी तेज़ उड़ान तो हवा भरती है
या फिर ख़्वाब...!

एक थका हुआ सच

सच मेरी तख़लीक की बुनियाद है
उसके नाम पर मेरा वजूद
जितनी बार भी टुकड़े-टुकड़े किया गया है
'अमीबा' की तरह कटे हुए वजूद का हर हिस्सा
खुद एक वजूद बन गया है
जितनी बार भी सच के सलीब पर
मेरे वजूद को चढ़ाया गया है
मैंने एक नये जन्म का लुत्फ़ उठाया है
पर हर बार के अन्त और उपज ने
मुझे थका दिया है
ऐ साथी, मैं चाहती हूँ
कि मेरी गर्दन से तुम यह लेबिल उतारो
अपनी आँखों में झूठा प्यार सजाकर
मेरे सामने आओ
कानों में झूठी प्यार भरी सरगोशियाँ करो
मुनाफ़क़त* की ज़ंजीरे
कंगन बनाकर मुझे पहनाओ
इतनी मक्कारी से मुझे प्यार करो
कि रूह बर्दाश्त न कर पाए
और तड़पकर मेरे वजूद से आज़ाद हो जाए!

---

*मुनाफ़क़त पाखंड

सपने से सच तक

रात के जुगनू को पकड़ कर
बोतल में बंद करके
सुबह उसे परखने का खेल
मैंने ख़त्म कर दिया है
मेरी कहानी जहाँ ख़त्म हुई
वहीं मेरी सोच का सफ़र शुरू हुआ है
पहला शब्द 'आग़ूं-आग़ूं' उच्चारा था
तो भीतर की सारी पीड़ा अभिव्यक्त की थी
आज भाषा पर दक्षता हासिल करने के बावजूद भी
गूंगी बनी हुई हूँ
तुम्हारा कशकोल देखकर
अपनी मुफ़लिसी का अहसास होता है
बेशक देने वाले से लेने वाले की
झोली वसीह होती है
यह राज़ मुझे समंदर ने बताया है!

तन्हाई का बोझ

दोस्त, तुम्हारे फरेब के जाल से
निकल तो आई हूँ
मगर हक़ीक़त में दुनिया भी दुख देने वाली है
रफ़ाक़त के झूठ को परख कर
वजूद से काटकर तुम्हें फेंक दिया
तो, बाक़ी रही भीतर की तन्हाई
तन्हाई का बोझ लाश की तरह भारी है
मैं सच्चाई की डगर की मुसाफिर हूँ
पर उस ओर कौन सा रास्ता जाता है?
तुम्हें परे करती हूँ तो सामने कोहरा है
सोचती हूँ, जब तुम साथ थे
वह साथ, सच था या झूठ
पर मेरा वजूद बहुत हल्का था
आज फिर मेरे पंख उड़ने के लिए उत्सुक हैं
धरती तो तपते तांबे की तरह है
दर्द का तो यहाँ अन्त ही नहीं
दर्द ऐसा सागर है,
जिसका दूसरा किनारा नहीं
मैं दूसरे किनारे की तलाश में
उम्मीद की कश्ती बनाकर निकली हूँ!

समंदर का दूसरा किनारा

तुम इन्सान के रूप में मर्द
मैं इन्सान के रूप में औरत
'इन्सान' अक्षर तो एक है
मगर अर्थ तुमने कितने दे डाले
मेरे जिस्म की अलग पहचान के जुर्म में
एक इन्सान का नाम छीनकर
और कितने नाम दे डाले
मैं बीवी हूँ, मैं वेश्या हूँ, महबूबा हूँ, रखैल हूँ
तुम्हारे लिये हर रूप में एक नया राज़ हूँ
तुम जिस कोण से भी देखोगे
तुम्हें उसी स्वरूप में नज़र आऊँगी
गिद्ध की नज़र से देखोगे तो
गोश्त का ढेर हूँ
मेटरनिटी होम की बिल्ली की नज़र से देखोगे तो
ख़ून का तालाब हूँ
बच्चे की तरह खिलौना तोड़कर देखोगे तो
मेरे भीतर कुछ भी नहीं हूँ
जिस्म के पेचीदगी से सफर करते
तुम लज़्ज़त की जिस मंजिल तक पहुँचते हो
वहीं से मेरे राज़ की शुरुआत होती है
तुम डुबकी लगाने से समन्दर के दूसरे किनारे को
छू नहीं सकते
अगर समझ सको तो राज़ हूँ
जज़्ब करो तो कतरा हूँ
महसूस कर सको तो प्यार हूँ!

जज़्बात का क़त्ल

मेरी तुमसे तो कोई जंग न थी
फिर क्यों तुमने स्नेह का संदेश भेजकर
धोखा देकर करबला बुलाया
मेरे मन में कोई खोट न था
मैंने दोस्ती के लिये दोनों हाथ बढ़ाये
तुमने मेरे खाली हाथों में हथकड़ियाँ डाल दीं
मेरे पास वैसे भी कौन से हथियार थे
तुम कितने तीर ले आए
इतने काफ़िले के लिये
अरमान, ऐतबार, उम्मीद और मुहब्बत
चंद जज़्बे जो साथी बनकर मेरे साथ आए
वे तुमने एक एक करके मौत के घाट उतारे
मुझे अकेला करके करबला के मैदान में
मुनाफ़क़त के तीर बरसा कर मारा है
पर मेरा शऊर ज़िन्दा है
याद रखना वह क़यामत तक
तुम्हें माफ़ नहीं करेगा!

करबलाः इराक का एक स्थान जहाँ इमाम हुसैन के दूसरे बेटे हज़रत अली की मौत हुई और दफनाया गया

शोकेस में पड़ा खिलौना

मुझे गोश्त की थाली समझकर
चील की तरह झपटे मारो
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं!
मुझसे तुम्हारा मोह ऐसा
जैसे बिल्ली का छेछड़े से
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं!
मेरे जिस्म को खिलौना समझकर
चाहो तो खेलो, चाहो तो तोड़ दो
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं।
मैं तुम्हारे शो-केस में पड़ी गुड़िया
कितनी भी तुम तारीफ़ करो
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं!
रीतियों ने नायिका बनकर मुझे वेश्या बनाया,
तुम्हारी ख़्वाहिशों के चकले पर है नचाया
उसे प्यार समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं!
कायनात के हर राज़ पर सोच सकती हूँ
तुम्हारे मनोरंजन के लिये बख़्शी गई हूँ
इसे सच समझूँ
इतनी भोली तो मैं नहीं!
सुसई बनकर पहाड़ उलांघूँ
प्यार क्या है, जानती हूँ

सोहनी बनकर दरिया में गोता लगाऊँ
रिश्ते क्या हैं, जानती हूँ
मूमल बनकर ता-उम्र इन्तज़ार करूँ
वस्ल क्या है, जानती हूँ
नूरी बनकर न्याज़ करूँ
हस्ती क्या है, जानती हूँ
लैला बनकर, गहने शोलों में डालूँ
क्या चाहती हूँ, जानती हूँ
'मारुई' बनकर 'उमर' के आगे अधीनता मान लूँ
निर्बल बिल्कुल नहीं हूँ, जानती हूँ
ख़ुद को पहचानकर, सच कहती हूँ
मैं प्यार करना जानती हूँ
अना के तख़्त से उतर आओ प्यारे
पास आओ, तुम पास आओ
हाथ में हाथ देकर, जीवन पथ पार करें
क़दम-क़दम आज़ाद उठाएँ
अपने दाने आप चुगकर
पंछियों की तरह प्यार करें!

सहारे के बिना

ऐ खुदा, मुझे इतनी हिम्मत दे
कि गुलामी के लेबल, जिसे प्यार समझकर
गले में पहनकर,
मदारी की डुगडुगी पर नाचती हूँ
वह उतार कर फेंक दूँ
राणा, जो लौटने वाला नहीं
फूँक मारकर उस दिये को बुझा दूँ
मशाल जलाकर, अंधेरे को चीरकर
अपना रास्ता ढूँढकर
आगे, बहुत आगे मैं बढ़ जाऊँ
मूमल की अक्लमंदी ने
अगर काक महल फिर से जोड़ा भी हो
पर मैं अपना हुस्न गँवा बैठी हूँ
अब किसी भी जादू से खिंचा
कोई भी राजा यहाँ आने वाला नहीं
वक़्त की बाढ़ सब बहा गई
अब तो मेरी झोली भी खाली है
ऐ खुदा, मुझे इतनी हिम्मत दे
कि मूमल के सहारे के बिना
अपने हाथों से तिनके चुनकर झोंपड़ी बनाऊँ
ये आँखें
राणे के लिये मुंतज़िर हुई हैं
उन्हें इतना समय दे
कि दुनिया में जहाँ कहीं भी
ज़ुल्म और जबर के तहत कोई रोए

वे सभी आँसू अपनी आँखों में समा पाऊँ
इन हाथों को इतना तो बड़ा करो
कि सैकड़ों मशालें जलाकर चलती रहूँ
दुनिया में जहाँ भी अंधेरा है
वहाँ रोशनी की किरणें फैलाती रहूँ!

तख़्लीक़ की लौ

अमावस की रातों में
तेरा इन्तज़ार करते करते
जात का दिया बुझ भी जाए
मेरी प्रतिभा की लौ जलती रहेगी!

काश मैं समझदार न बनूँ

तजुर्बेकार ज़हन गर सब समझ जाये
ज़हन में सोचों को बंद करके
ताला लगा दूँ
चालाक आँखें जो सब कुछ ताड़ जाती हैं
उन पर लाइल्मी* के शीशे चढ़ा दूँ
अपनी ही हसास** दिल को
कभी गिनती में ही न लाऊँ
माज़ी की सारी तुलना और तजुर्बा
जो ज़हन पर दर्ज है
उसे मिटा दूँ
मेरी अक़्ल मेरे लिये अज़ाब है
काश, मैं समझदार न बनूँ!
तुम्हारी उंगली पकड़कर
ख़्वाबों में ही चलती रहूँ
तुम्हारे साथ को ही सच समझकर
सपनों में उड़ती रहूँ
तुम जो भी मनगढ़ंत कहानी सुनाओ
बच्चे की तरह सुनती रहूँ
मेरे ज़हन को पतंग बनाकर
जिस ओर उड़ाओ, उड़ती रहूँ
मेरी अक्ल मेरे लिये अज़ाब बनी
काश, मैं समझदार न बनूँ!

---

*लाइल्मी Ignorance

** हसासभावुक

मन के अक्स

मजबूत समझते हो चट्टान की तरह
विस्फोटित हो जाऊँ तो आबशार हूँ
मेरा अक्स न बना
वसीह समझते हो समुद्र की तरह
बादल हूँ, बूँद बनकर उड़ूँ
मेरा अक्स न बना
चेहरे पर छाई खामोशी को न देख
तड़प उठूँ तो तूफान हूँ
मेरा अक्स न बना
अपनी महदूद नज़र से न देख मुझे
फैल जाऊँ तो सहरा हूँ
मेरा अक्स न बना
मेरी डोर को, हासिल ज़िन्दगी न समझ
रुक जाऊँ तो लाश हूँ
मेरा अक्स न बना!

उड़ान से पहले

अम्मा, रस्मों रिवाज़ों के धागों से बुनी
तार-तार चुनर मुझसे वापस ले ले
मैं तो पैबंद लगाकर थक गई
वो अपनी बेटी को कैसे पेश करूँगी?
अम्मा, बन्द दरवाज़ा, जिसकी कुंडी
तुम्हें भीतर से बंद करने के लिये कहा गया है
खोल दे, नहीं तो मेरा क़द
इतना लम्बा हो गया है
कि वहाँ तक पहुँच सकती हूँ
माँ मुझे माफ़ कर देना
तुझे छोड़ कर जा रही हूँ
क्योंकि, अपनी बेटी को अंधेरों में
ठोकरें खाते हुए देख नहीं पाऊँगी
मैं कुतिया तो नहीं
जो एक निवाले की ख़ातिर
भाई, बाप, ससुर, पति और बेटे का मुँह तकती रहूँ
और उनके क़दमों में लोटती रहूँ
अम्माँ, यह रोटी का चूरा मुझे मत परोस
जो तुझे भी खैरात में मिला है
अब्बा की विरासत की चौथाई
और पति के हक़ महर के अहसान का
फंदा अपनी गर्दन से निकालना चाहती हूँ
अगर जीता जागता जीव हूँ तो
जीने की ख़ातिर संघर्ष करूँगी
मैं अपने ज़हन को, रवायत के अनुसार
पिंजरे में बंद करके, किसी को सौंप नहीं सकती
चादर के नकाबों और बुर्के की मोटी जाली से
दुनिया को देखना नहीं चाहती

वहाँ से दुनिया ज़्यादा धुंधली नज़र आती है
मैं अगर चारदीवारी में बंद हूँ
तो भी जानती हूँ, कि
बाहर इन्सान, दुश्मन देव, आदम बू आदम बू करते हुए
शहर में घुस आया है
घर के मर्द मुझसे इमाम ज़ामिन बंधवाकर
खंजर और भाले लेकर लड़ने के लिये जा रहे हैं
और मुझसे कहते हैं कि खिड़कियों के झरोखों से तमाशा देख
उस देव से ख़तरा तो मेरे वजूद को भी है
फिर अपने बचाव के लिये क्यों न लड़ूँ?
यह कैसी ज़िन्दगानी है
कि रोटी की तरह जीवन भी मुझे झोली में मिलता है
मैं झोली भरने वाले 'सख़ी' की दरबार में मुजावर बनकर
अपने आप को अर्पण कर देती हूँ
अम्मा, मुझे मोहताजी की यह कौन सी घुट्टी पिलाई है
जो सभी अंग सलामत होने के बावजूद
रहम के क़ाबिल नज़र आती हूँ
यह देखो, मेरा हाथ कुंडी तक पहुँच गया है
अब्बा के आँगन में रखे पिंजरे से
अपने ज़हन को आज़ाद किये ले जा रही हूँ
मुझे अगर तुम याद करो और,
मेरे लिये कुछ करना चाहो
तो सूरज के होते हुए
अंधेरे में रहने के कारण पर कुछ सोचना
अगर कोई भी कारण समझ में न आए
तो भीतर से कुंडी खोल देना
बाहर वसीह आसमान के तले, खुली हवा में
अगर मैं तुम्हें नज़र न भी आई
तो मेरी बेटी या नातिन की
आज़ाद आवाज़ की गूँज तुम ज़रूर सुनोगी!

शराफ़त के पुल

मैं सारा जीवन
औरों की बनाई शराफ़त के पुल
पर चली हूँ
पिता की पगड़ी, भाई की टोपी की ख़ातिर
मैंने हर इक सांस उनकी मर्ज़ी से ली है
जब बागडोर मेरे शौहर के हाथ में दी गई
तब मैं चाबी वाले खिलौने की तरह
उसके इशारे पर हँसी और रोई हूँ
बचपन में, जिन-भूतों से डरा करती थी
अब तलाक़ से डरती हूँ
इज़्ज़त और शराफ़त की मर्यादा को
मैंने लिबास समझ कर ओढ़ा है
जब वह तलाक़ का नाम लेकर डराता है, तो
ख़ुद को मायूसी के कफ़न में लिपटा हुआ पाती हूँ
अब्बा ने दहेज में मुझे क़ीमती ज़ेवर दिया था
सौत की तरह उसका हर लफ्ज़
हृदय पर मूँग दलता है
मेरे ज़हन का गला घोंटकर, जज़्बों के खून में से
क़लम डुबाकर भरोसे को गढ़ा गया है
मेरे इन्सान होने, या न होने की बहस पर
आधा इन्सान जानते हुए, कानून लिखा गया है
मेरी सोचों, ख़्वाहिशों, जज़्बों और उमंगों की
खोपड़ियों से, समाज की तामीर की गई है!

एक अजीब बात

जो भी सुनता है
चौंक उठता है
आज एक लड़की ने
सदके के कुरबान गाह पर
सर टिकाने से इन्कार किया है
उसने जीना चाहा है, पर
लोग तन्ज़ के पत्थर लेकर
संगसार करने आए हैं
शौहर को ख़ुदा मानने से इन्कार किया है
कुफ्र किया है!
उसने जीना चाहा है
रोटी, कपड़े और मकान के लिये
संघर्ष करना चाहा है
बख़्शीश में मिले जीवन को
स्वीकार नहीं किया है
अपनी बागडोर को औरों के हाथ से छीना है
ख़ुद को इन्सान समझकर
फैसले करने का हक़ चाहा है
उसने जीना चाहा है
सदियों से पहना चिह्न, गले से उतारा है
रोशनी की एक किरण के लिये
रीति-रस्मों को उलांघा है
उसने जीना चाहा है
जो भी सुनता है
चौंक उठता है!

नया समाज

मेरे पिटारे में खोटा सिक्का डालते हुए
टेढ़ी आँख से क्या देखते हो?
मुहब्बत और भूख, दोनों अंधी होती हैं
उनकी डोर तुम्हारे हाथ में है
जैसे चाहो, अपनी उंगली पर नचा सकते हो
मेरी ज़रूरत तुम्हारे पास गिरवी है
सो चाहो तो बबूल की झाड़ी भी खिला सकते हो
बूँद-बूँद ज़हर तमाम उम्र मुझे पिला सकते हो
मुट्ठी भर मुहब्बत एक बार देकर
बाद में ऊँट की तरह जितना चाहे सफ़र करा सकते हो
नज़रें मिलाते हुए कतराते क्यों हो?
'दुख' और 'इन्तज़ार' दोनों गहरे होते हैं
और उनकी नब्ज़ तुम्हारे हाथ में है
इसलिये जितना चाहो इलाज में विलम्ब कर सकते हो
चुपचाप नज़रें झुकाकर तुम्हारे पीछे चलती
दुल्हन की बागडोर तुम्हारे बस में है
जहाँ चाहो मोड़ सकते हो।
बेजान मूर्ति की तरह तेरे शोकेस की ज़ीनत बनूँ
मेरे हिस्से का जीवन भी तुम गुज़ारते हो
रोज उभरता सूरज मुझे आस बंधाता है
हमेशा ऐसे होने वाला नहीं
आँखों में आँखें डालकर आख़िर तो पूछूँगी
कि 'मुझे इस तरह क्यों घसीट रहे हो?'
इससे पहले कि मेरी हिम्मत भीतर से नफ़रत बनकर फूटे
आओ तो मिलकर ये समूरे फासले जड़ों से उखाड़ फेंकें
बराबरी की बुनियाद पर नए समाज के बूटे बोयें!

प्रीत की रीत

मैं प्रीत की रीत निभाना जानती हूँ
तेरे मेरे बीच में
अगर दरिया होता
तो पार कर आती
पहाड़ों के दुश्वार फासले होते
तो लाँघ आती
पर यह जो तुमने मेरे लिये
तंग दिली का क़िला खड़ा किया है
मसलिहत की छत डाली है
रीति-रस्मों का रंग पोत दिया है
फरेब का फर्श बिछाया है
लफ़्ज़ों की जादूगरी से
उनको सजाया है
तुम्हारे उस मकान में
मैं समा न पाऊँगी!

बेरंग तस्वीर

मेरे महबूब, मुझे तुमसे मुहब्बत है
पर मैं, तुम्हारे आँगन का कुआँ बनना नहीं चाहती
जो तुम्हारी प्यास का मोहताज हो
जितना पानी उसमें से निकले तो शफाक़
न खींचो तो बासी हो जाए
मैं बादल की तरह बरसना चाहती हूँ
मेरा अंतर तुम्हारे लिये तरसता है
पर यह नाता जो बंदरिया और
मदारी के बीच में होता है
मैं वो नहीं चाहती
तुम्हारे स्नेह की कशिश मुझे आकर्षित करती है
पर तुम्हारी ख्वाहिशों के हल में
जोते हुए बैल की तरह फिरना नहीं चाहती
तुम्हारे आँगन के भरम के खूँटे से बंधकर
वफाएँ उच्चारना नहीं चाहती
लूली लंगड़ी सोच से ब्याह रचाकर
अंधे, बहरे और गूंगे बच्चों को जन्म देना नहीं चाहती
मेरे सभी इन्द्रिय बोध सलामत हैं
इसलिये देखती हूँ, सोचती भी हूँ
भूख, दुख और खौफ़ मौत की परछाइयाँ बनकर
मेरे खून में खेल रही हैं
और तुम मेरी आँखों में हया देखना चाहते हो
बाहर जो दर्द की लपटें जल रही हैं
उनकी आँच तो मुझ तक भी आई है
और तुम मेरे चेहरे को गुलाब की तरह
निखरा हुआ देखना चाहते हो

मैं तुम्हारे ख़यालों के कैनवस पर
बनाई गई कोई तस्वीर नहीं हूँ
जिसमें अपनी मर्ज़ी से रंग भरते रहो
और मैं तुम्हारे निर्धारक फ्रेम से बाहर निकल न पाऊँ
जानती हूँ तुम्हारे बिना मैं कुछ भी नहीं हूँ
मेरे सिवा तुम कुछ भी नहीं हो
मुहब्बत के रस ज्ञान का लुत्फ़ उठाने के लिये
आओ तो एक दूसरे के लिये आईना बन जायें
मेरे बालों में उंगलियाँ फेरते हुए
मुझसे चाँद के बारे में बात न करो
मेरे महबूब मुझसे वो बातें करो
जो दोस्तों से करते हो!

प्यार की सरहदें

प्यार तो मुझसे बेशक करते हो
तुमने रोटी, कपड़ा और मकान देने का
वादा किया है
उसने बदले में जीवन मेरा गिरवी रखा है
मुझे घर की जन्नत में
खुला छोड़ दिया है
जहाँ विवेक के पेड़ में सोच का फल उगता है
रोज़ उगता सूरज मुझे आगे बढ़ने के लिये उकसाता है
आज वह फल खाया है, तो
आपे से निकल गए हो
सोच ने ज़हन की सारी खिड़कियाँ खोली हैं
तुम्हारी जन्नत में दम घुटता है
फ़ैसले करने की आज़ादी चाहती हूँ
सोच में फल ने ताक़त बख़्शी है
रोटी, कपड़ा और मकान आसमान के तारे तो नहीं
जिन्हें तुम तोड़ सकते हो
और मैं तोड़ नहीं सकती?
रीतियों, रस्मों, कानून, मज़हब को
पहाड़ बनाकर आड़े न लाओ
समझ की उंगली पकड़ कर
सभी कठिनाइयाँ पार कर जाऊँगी
प्यार तो मुझे बेशक करते हो
पर प्यार को नकेल बनाकर नाक में तो मत डालो
हाँ! विवेक के पेड़ से
सोच का फल तुम भी खाओ
आओ तो फूल और खुशबू की तरह प्यार करें!

मुहब्बतों के फासले

मैं हाथ में हाथ देकर
जीवन में तुम्हारे साथ चलना चाहती हूँ
और तुम!
नाक में नकेल डालकर
मुझे घसीटना चाहते हो
मैं प्रेम के नशे में मदहोश
अपने आपको तुम्हें अर्पण करना चाहती हूँ
और तुम!
खुदा बनकर मुझे तोड़ना और जोड़ना चाहते हो
मैं प्रीत की पायल छनकाकर
तुम्हारे मन-आँगन में अमर नाच नाचना चाहती हूँ
और तुम!
मेरी मजबूरियों का राग आलापकर
ज़रूरतों की डफ़ली पर
कठपुतली के समान नचाना चाहते हो
मैं खुशबू बनकर तुम्हारे तन में समाना चाहती हूँ
और तुम!
मुझे जेब में डालकर चलना चाहते हो
तुम्हारे मेरे बीच के फासलों पर
मैं रोना चाहती हूँ
और तुम!
चुटकी बजाकर मुझे हँसाना चाहते हो!

विश्वासघात

मज़हब की तलवार बनाकर
ख़्वाहिश के अंधे घोड़े पर सवार हो
मेरे मन आँगन को रौंदकर
मेरे विश्वास को सूली पर टाँगकर
तुमने दूसरा ब्याह रचाया
तुम संग बिताए सारे पलों को
मैंने चमड़ी की तरह मांस पर चिपकाया है
तुमसे वैवाहिक संबंध जोड़कर
बाबुल का आँगन पार करके
तुम्हारे लाये हुए साँचे में
मैंने खुद को ढाला है
प्यार क्या है यह मैं नहीं जानती
पर तुम्हारे घर ने, बरगद के दरख़्त की तरह
मुझे छाँव दी
ज़माने की आँखों के बरसते बाणों से बचाया
उसी सांचे में रहने की ख़ातिर
अपने वजूद को चीरती, काटती, तराशती रही
तुम्हारे ख़ून को अपने माँस से जन्म दिया
औलाद भी तेरे मेरे बीच का बंधन न बन पाई
बंधन क्या है यह मैं नहीं जानती
मुझे फ़क़त एक सबक़ पढ़ाया गया था
कि तुम्हारा घर मेरी आख़िरी पनाह है
मैंने तलाक शुदा औरत को
ज़माने की नज़रों से संगसार होते
कई बार देखा है
इसीलिये बारिश में डरी हुई बिल्ली की मानिंद

घर का एक कोना और तुम्हारा नाम
इस्तेमाल करने की मेहरबानी ली है
जन्नत क्या है? जहन्नुम क्या है?
मैं नहीं जानती, पर यक़ीन है कि जन्नत
विश्वास से बढ़कर नहीं है
और जहन्नुम सौत के कहकहों से भारी नहीं
लोगों की तन्ज़ और रहम भरी नजरों से
संगीन कोई पुलसरात* नहीं
कभी मुझे सौत का चेहरा
अपने जैसा नज़र आता है
बे-ऐतबारी की झुर्रियाँ
उसके माथे पर भी देखी हैं
मेरी तरफ देखते, उसके सीने में
खुशी, हाथों में पकड़े कबूतर की तरह छटपटा उठती है
मैं उससे लड़ नहीं सकती
उसके साथ तुम हो
तुमसे लड़ नहीं सकती
मज़हब, कानून और समाज तुम्हारे साथी हैं
रीत-रस्में तुम्हारे हथियार हैं
दिल चाहता है कि ज़िन्दगी की किताब से
वे सब बाब फाड़कर फेंक दूँ
जो अपने फ़ायदे की ख़ातिर
तुमने मेरे मुक़द्दर में लिखे हैं!

*पुलसरात A narrow bridge of respectability.

आत्मकथा

सखी तुम पूछती हो कि
मैं जीवन कैसे गुज़ारती हूँ
शादी के बाद 'लिखती' क्यों नहीं?
मैं फरमाबरदारी की टेस्ट-ट्यूब में पड़ी
'पारे' की तरह मौसमों की मोहताज हूँ
जन्म से माँ वफ़ा की घुट्टी पिलाती आई है
जो ख़ामोश लिबास की तरह वजूद से चिपकी है
दुखों का तापमान बढ़ने पर भी
टेस्ट-ट्यूब तोड़कर बाहर न निकल पाई हूँ
मेरा घर ऐसा जादुई है
कि मैं खुद को भूलकर मशीन बन जाती हूँ
समूचा व्यवहार मैं इसके चुटकी बजाने पर कर डालती हूँ
अपने भीतर झाँककर जब ख़ुद को देखती हूँ
तो घर मेरे लिये दलदल बन जाता है
मैं तिनके की सूरत में रेत की बवंडर में फेंकी गई हूँ
और वक़्त के कदमों में लोटती हूँ!
दुनिया में आँख खोली तो मुझे बताया गया
समाज जंगल है
घर इक पनाहगाह
मर्द उसका मालिक और औरत किरायेदार!
किराया वह वफ़ादारी की सूरत में अदा करती है
मैं भी रिश्ते-नातों में खुद को पिरोकर
किस्तें अदा करती हूँ!
सखी, मैं इसीलिये नहीं लिखती, क्योंकि
मैंने सभी जज़्बात एकत्रित करके

वफ़ादारी के डिब्बे में बंद कर दिये हैं
मेरी सोच, बुद्धिमानी और ढेर सारी
इकट्ठी की हुई किताबों को दीमक चाट रही है
मैं अपने शौहर की इज़्ज़त और अना का प्रमाण पत्र हूँ
जिसे वह हमेशा तिजोरी में बंद रखना चाहता है!

निरर्थक खिलौने

आज मेरे आँगन पर
सूरज सवा नेज़े पर उतर आया है
धरती मेरे दिल की तरह झुलस गई है
मेरी नहीं बिटिया के मुंह से चूसनी छीनकर
कोई शैतान, कायनात का दर्द उँडेल गया है
मैंने किसी के साथ जंग का ऐलान तो नहीं किया था
फिर क्यों करबला का किस्सा दोहराया गया है
अदालत की कुर्सी पर जज सबके बयान सुन रहा है
अपराधियों के कटघरे में खड़े हैवान के आगे
मैंने अपनी छातियाँ काट कर फेंकी हैं
मुझसे हमदर्दी करने वाले दर्दमंद इन्सानों
मुझे फक़्त लफ़्ज़ों की एक ऐसी मुट्ठी दो
कि मेरे होंठ वह बोली बोल पाएँ
जो हवस के तीरों से घायल
मेरी दूध पीती बच्ची, ख्वाब में मुस्करा सके
मैं उसे चूमती हूँ
तो वह नींद से चीखकर उठ जाती है
यह मेरी मासूम पर कैसी वेदना ढाई है
कि बाप की चौड़ी छाती और
ममता के आगोश में भी
वह चीरे हुए मुर्गे की तरह तड़प उठती है
मेरे मुल्क के कानून का खोटा सिक्का
क्या मुझे वह खिलौना दे सकेगा
जिससे यातना के अंगारों पर
सोई हुई बेटी को बहला सकूँ
ऐ खुदा! जब मैं तेरी अदालत में

बेटी के बेकार खिलौने
और खून में डूबी चड्डी ले आऊँगी
तो इन्साफ के तराज़ू के दूसरे पलड़े में
कहो, तुम क्या डालोगे?

मासूम बच्चियों के रेप पर लिखी।

शरीयत बिल

मैं तीसरी दुनिया के तरक्क़ी पसंद समाज में
जहालत के अंधेरे के घने जंगल में
भटकती हुई पथिक हूँ
जिस्मानी मतभेद के कसूर में
क़िलों के भीतर कैद की गई हूँ
खुद को पहचानने की ख़ातिर
मैंने सदियों से सफ़र किया है
शरीयत बिल की दावेदारी करके
आचरण की ज़ंजीरों में दुबारा
मुझे बांधना चाहते हो
असेम्बली के सदन में बैठकर
मकड़ी के जाल जैसा कानून बुनने वालो
यह कैसे मुमकिन है कि
मैं तुझे फिर वहीं मिलूँ
जहाँ चारदीवारी में बंद ऊँची हवेलियों के भीतर
ख्वाज़ा सराइन के पहरे में
अपनी तीन बीवियों,
व सैंकड़ों कनीज़ों के अजायब घर में
'मोमी' की तरह चुप रहने के लिये छोड़ गए थे
तेरे अत्याचार की तारीख़ का पेट
इज़राइल के शिकंजे जैसा है
सदियों से मेरी ख्वाहिशों और हक़ों का गला घोंटने वाले
तुम्हारा मन अब भी नहीं भरा?
ऐ अंधेरे के आशिक!
तुम्हारी सोच किसी चमड़ी की तरह
समाज से चिपट गई है

हर औरत यह जानती है कि
शराफत सर पर ओढ़ी चुनरी का नाम नहीं है
जिसे सर पर ओढ़ने के लिये तुम
नायक की तरह हुक्म देते हो
मैं तारीख की पीड़ाओं से
जन्म लेने वाला शऊर हूँ
जिसे ख़ाकी वर्दी, लाँग बूट
कुचल नहीं पाएंगे
तेरी थोपी हुई ख्वाहिशों के खिलाफ़
सारी दुनिया के हुनरमंदों को
साथ देने के लिये आवाज़ दूँगी
जुल्म की कोई भी लाठी
यह कहने से रोक न सकेगी
कि शरीयत बिल मुझे मंजूर नहीं!

धरती के दिल के दाग़

मेरी सम्पूर्ण कायनात
आपकी गोली के घेरे में है
अपने बेटे को
हाथों से खाना खिलाती हूँ
आपके पत्थर जैसे चेहरे को देखकर
निवाला उसके हलक में अटका तो होगा
मैंने तो हमेशा बच्चे को
प्यार भरी लोरियाँ सुनाईं
चंगुल से तुम्हारे अगर बचा भी
तो क्या इन्सानियत पर विश्वास कर पाएगा?
मैं जानती हूँ कि आपकी मर्ज़ी के आगे
गर्दन न झुकाने के एवज़
राजेश की तरह मेरा बच्चा
फांक-फांक होकर, खून में नहाकर लौट आयेगा
पर ऐ इन्सानी वजूद के दुश्मन
मैं तुम्हारे आगे कोई भी अपील नहीं करूँगी!
मेरी सारी खुशियाँ
आपकी गोली के घेरे में है
मेरा साथी
जिसके साथ जीवन का हर पल बाँटती हूँ
ज़ुल्म के पिंजरे में क़ैदी है
खून पसीना देकर
यह छत हमने बनवाई है
इन्सानी खून चूसने वाले जौक जैसे लोगो
मैं तुम्हारे सामने कोई अपील नहीं करूँगी!
कितनी बहनें, माताएँ
सुहागनें, महबूबाएँ

तुम्हारे इस घिनौने क़िरदार के कारण
जुदाई की फांसी पर लटक गई हैं
गर्भवती औरतों के पेट में
बच्चों ने हरकत करनी छोड़ दी है
कितने ही पिता अपने बुढ़ापे को
गले लगाकर रो रहे हैं
बच्चे पिता के लिये सिसक-सिसक कर सोए हैं
भाइयों ने सब कुछ बेचकर
अफ़ीम इकट्ठा किया है
समाज को कीड़े की तरह खाने वाले
मैं तुम्हारे सामने कोई भी अपील नहीं करूँगी
हमीद घांघरों, सिंध की शूरवीर सपूत
ज़िया जैसे आमर के आगे
हरगिज़ न झुकी
मेहंदी रचे हाथों से
सर ऊँचा किये
महबूब की क़ब्र पर मिट्टी डाली
नन्हीं बच्ची को पीड़ाओं का पाठ पढ़ाया
वक़्त से पहले बड़ा किया
वही आज माणिक थेबे के आगे
रो पड़ी है
अपनी शक्ति को भुला बैठी है
क़ौमी ग़ैरत के नाम पर
कायरों के सामने अपील की है
ऐ उभरते शऊर के दुश्मनों
मैं कोई भी अपील तुम्हारे सामने नहीं करूँगी!
तुम जो मेरी ज़बान में बात करते हो
पर हर्गिज़ मेरे अपने नहीं हो
मुखिया की कोख से जन्म लेने वाली
हरामी औलाद हो

जिसे पुलिस ने प्यार से पालकर बड़ा किया है
स्वार्थी सियासतदानों ने चूमकर
सीने से लगाया है
धरती के माथे पर लगी कालिख के दाग़ हो
मैं कोई भी अपील तुम्हारे सामने नहीं करूँगी!
आपको धरती से जड़ों समेत उखाड़कर
फेंकने की ख़ातिर तख़लीक़ को फावड़ा बनाऊँगी
भयभीत, डरे हुए इन्सानों के भीतर
शक्ति बनकर उभर आऊँगी
बारूद के ढेर पर गर्व करने वाले वहशियो!
तुम साम्राज्य की ओर से मढ़ी हुई लानत हो
निर्बल पर जुल्म करने वालो
सिन्ध की तारीख का ख़ूनी बाब हो
मैं किसी यज़ीद* के हुक्म की पैरवी करने वाले शमर** को
हुसैन का ख़ून माफ़ नहीं करूँगी
बलवान क़ौम बनकर, वजूद की सलामती के लिये
आपको आपकी सोच सहित
मिटा दूँगी!

---

*यज़ीद — Arab tyrant Caliph, who was instrumental for martyrdom of Hazrat Hussain.

**शमर — One Who Killed Hussain

अमर गीत

जिस धरती की सौगंध खाकर
तुमने प्यार निभाने के वादे किये थे
उस धरती को हमारे लिये क़ब्र बनाया गया है
देश के सारे फूल तोड़कर
बारूद बोया गया है
ख़ुशबू 'टार्चर' कैम्प' में आख़िरी सांसें ले रही है
जिन गलियों में तेरा हाथ थामे
अमन के ताल पर मैंने सदियों से रक्स किया था
वहीं मौत का सौदागर पंख फैला रहा है
गरबी की सलवार, सिलवटों वाला चोला
और सुर्ख़ लाल दुपट्टा
मैंने संदूक में छिपा रखे हैं
अपनी पहचान को निगलकर, गटका गई हूँ
रास्ते पर चलते
आसमान पर चौदवीं के चाँद को देखकर
मैं तुम्हें भिटाई का बैत सुना नहीं सकती
कलांशकोफ के धमाकों से मेरा बच्चा
चौंक कर नींद से जाग उठता है
मैं उसे लोरी सुनाने के लिये लब खोलती हूँ तो
घर के सदस्य होंठों पर उंगली रखकर
ख़ामोश रहने के लिये कहते हैं
अखबारें, डायनों के नाखून बनकर
रोज़ मेरा मांस नोच रही हैं
और सियासतदानों के बयान

रटे हुए तोते समान लगते हैं
मैं खौफ़ की दलदल में हाथ पैर मारना नहीं चाहती
ऐ मेरे देश के सृजनहार
ऐसा कोई अमर गीत लिख
कि जबर की सभी ज़ंजीरें तोड़कर
मैं छम छम छम छम नाचने लगूँ!

मशीनी इन्सान

हम बड़े शहर के लोग
इज़्ज़त से ज़िन्दगी गुज़ारने की ख़ातिर
'रोबोट' की तरह चलते रहते हैं
घर चलाने की ख़ातिर
महंगाई की चक्की में पिसते रहते हैं
घर, जिसके लिये ख़्वाब देखे
उसके पीछे दौड़ में अपनी नींद गंवा बैठे
प्यार और दूसरे सारे लतीफ़ जज़्बे
जो हमें बेहतर साबित कर सकते हैं
उन्हें हम ड्राइंग रूम में सजाकर रखते हैं
हमारे बतियाये सारे शब्दों की
डेट एक्सपायर हो गई है
नए शब्द हमारे शब्द कोश में
मिस प्रिंट हो गए हैं
हम गूंगों और बहरों की तरह
एक दूसरे की ज़रूरत समझते हैं
जब वह किसी माहिर टाइपिस्ट की तरह
मेरे जिस्म के टाइपराइटर पर
तेज़ी से उंगलियों को हरक़त में लाता है,
तो मैं उसे वही रिज़ल्ट देती हूँ
जो उसकी माँग है!

बर्दाश्त

बर्दाश्त के जंगल में
मेरी आँखों से
तेरी याद की चिंगारी गिर पड़ी
खुशियों के मेले में
दिल को फिर नये ग़म की
भनक पड़ गई
तेरे मेरे दरमियान आसमाँ है फ़ासला
देखते देखते नज़र थक गई
सहरा में भटकती हिरणी की प्यास की तरह
प्रीत मरती जीती रही!

तुम्हारी याद

जुदाई के अंगारों पर
तेरी याद की नीली चादर ओढ़कर
जब चलती हूँ तो
अंगारे फूल बनकर पाँव चूमते हैं
तुम्हारी मुहब्बत मेरे शरीर में
साज़ बनकर जब छिड़ती है
आँखों के जागरण मुस्कराते हैं
जज़्बात का समन्दर खामोश है पर
नयन साहिल, फिर फिर छलकते हैं!

अन्तहीन सफ़र का सिलसिला

शहर भंभोर के मंजर में
तेरे मेरे बीच में जो सफ़र था
वो मैं कर न पाई
पहाड़, मेरे जज़्बों के आड़े
मोम की मानिंद थे
तेरे मेरे बीच में थी एक लकीर
वह मैं उलांघ न पाई
बिरह की आग मेरे लिये शबनम थी
तुम्हारी याद की चिंगारी को
मैं बुझा न पाई
प्रीत का पंछी तुम बिन उदास
मेरे हाथों में निढाल निढाल
चाहने पर भी उड़ा न पाई!

मुहब्बत की मंजिल

ऐसे तो न छेड़ो, मेरे जिस्म के तंबूरे को
जैसे कोई बच्चा मस्ती कर रहा हो
मेरा जिस्म कोई राज़ तो नहीं
जिसकी दरियाफ़्त करने के लिये
किसी नक़्शे की ज़रूरत है
और वह अलजेब्रा का सवाल भी नहीं
जिसके लिये पहले से ही फॉर्मूला तैयार हो
इस साज़ को छेड़ने के लिए कोई भी तरकीब
दुनिया की किसी भी किताब में दर्ज नहीं है
यह साज़ तो खुद ही बजने लगेगा
अगर तुम्हारे नयन प्यार के दीप बनकर जल उठें
तुम्हारी उंगलियों के पोर
मेरे जिस्म पर यूँ सफर करते रहें
जैसे कोई बर्फीले पहाड़ की चोटी पर
फतह का झंडा फहराना चाहता है
बर्फ़ का पहाड़ पिघलने लगेगा
अगर तुम्हारे हाथ मेरे पंख बनकर
मुझे मुहब्बत की मंजिल की ओर उड़ा ले जायें!

जात का अंश

शहर की रौनकें रास न आईं
महफिलों ने मन में आग भड़काई
दोस्तों की दिलबरी परख ली
दोस्त और दुश्मन का चेहरा एक ही नज़र आया
शहर छोड़कर मैंने सहरा बसाई
पर वहाँ भी सभी मेरे साथ आए
यादों के काफ़िले बनकर मेरे पीछे आए
शहर की तरह सहरा भी मेरा न रहा
मैंने दोनों बाँहें खोल दीं
आओ दोस्तो! मेरे अंदर जज़्ब हो जाओ
मेरे जिस्म की नसें
तुम्हारे पैरों से लिपटी हुई हैं
मैंने क़ुदरत के क़ानून पर संतुष्टि की है
मैं समन्दर बन गई
हर दरिया आख़िर मुझमें ही आकर समा जाता है
मैं मरकब की हैसियत से वसीह हूँ पर
मुझे अपनी जात के अंश की तलाश है
जानती हूँ कि वह इक कतरा होगा
एक पल में ही हवा में सूख जायेगा
मैं एक पल के लिये ही सही
उसे देखना चाहती हूँ
फिर चाहे वह हमेशा के लिये फ़ना हो जाये
मुझे अपनी जात के अंश की तलाश है!

अजनबी औरत

आईने में अजनबी औरत क्या सोचती है
मैंने पूछा 'बात क्या है?'
वह मुझसे छिपती रही
मैं लबों पर लाली लगाती हूँ तो वह सिसकती है
अगर उससे नैन मिलाऊँ तो
न जाने क्या-क्या पूछती है
घर, बाल-बच्चे, पति सभी खुशियाँ मेरे पास
और उसे न जाने क्या चाहिये?

खोटे बाट

मज़हब की तेज़ छुरी से
कानून का वध करने वालो
तुम्हारा कसाई वाला चलन
अदालत की कुर्सी पर बैठे लोग
तुम्हारी तराजू के पलड़ों में खोट है
तुम्हारे समूरे बाट खोटे हैं
तुम जो हमेशा मज़हब के अंधे घोड़े पर सवार
फ़तह का परचम फहराते रहते हो
क्या समझते हो? औरत भी कोई रिसायत है
मैं ऐसे किसी भी ख़ुदा, किसी भी किताब
किसी भी अदालत, किसी भी तलवार को नहीं मानती
जो आपसी मतभेद की दुश्मनी में
छुरी की तरह मेरी पीठ में खोंप दी गई है
क़ानून की किताबें रटकर डिगरी की उपाधि सजाने वाले
मेरे वारिस भी तो तुम जैसी मिट्टी के गूँथे हुए हैं
किसी को रखैल बना लें, रस्म के नाम पर ऊँटनी बना लें
ग़ैरत के नाम पर 'कारी' करके मार दें
किसी को दूसरी, तीसरी और चौथी बीवी बनाएँ
तुम्हारी तराजू के पलड़े में मैं चुप रहूँ
ख़ला में झूलती रहूँ
एक पलड़े में तुम्हारे हाथों ठोकी रीतियों, मज़हब
जिन्सी मतभेद के रंगीन बाट डाले हैं
दूसरे पलड़े में मेरे जिस्म के साथ तुम्हें साइन्सी हक़ीक़तें
मेरी तालीम और शऊर के बाट इस्तेमाल करने होंगे
तुम्हें अपने फैसले बदलने होंगे!

चादर

मेरे किरदार की चादर
सदा ही अपर्याप्त
जितनी आँखें मेरे बदन पर गढ़ीं
वहाँ तक चादर मुझे ढाँप न पाई
मेरे किरदार की चादर हमेशा से मैली
धोते-धोते मेरे हाथ थके हैं
जितनी ज़बाने ज़हर उगलती हैं
उन्हें धोने के लिये उतने दरिया नहीं है मेरे देश में
इस चादर में हमेशा छेद
सात संदूकों में छिपाऊँ तो भी
आपसी मतभेद के आक्रमणकारी चूहे कुतर जाते हैं
इस चादर को हमेशा ख़तरा
रीति-रस्मों के किलों में हमेशा इस पर पहरा
तो भी मेरे सर से खिसकती रहती है
रौशन रौशन नैनों वाली मेरी बेटी
अंधेरे के ऊन से
ऐसी चादर तुम्हारे लिये भी बुनी जा रही है
जिस में खुद को समई करने के लिये
वजूद को समेटते हुए सर झुकाना होगा
अगर मेरे थके थके हाथ वह चादर तुम्हें पेश करें
अपने पैरों तले रौंद डालना
रीति-रस्मों के सभी पहाड़ फलाँग जाना
मेरा हाथ पकड़कर मुझे वहाँ ले जाना
जहाँ मैं अपनी मर्ज़ी से
ज़िन्दगी से भरपूर साँस लूँ
तुमसा एक आज़ाद कहकहा लगाऊँ!

एक माँ की मौत

ज़िन्दगी मेरे बच्चे के गाल सी मुलायम
और कहकहों जैसी मधुर है
उन मधुर सुरों पर झूमते सोचती हूँ
मौत क्या है...? मौत क्या है...?
क्या मौत बेखबरी की चादर है?
जिसे ओढ़कर इतनी मैं पराई बन जाऊँगी
अपने बच्चे की ओर भी देख न पाऊँगी
मौत अंधेरे की मानिंद मेरी रगों में उतर जाएगी!
आखिर कितना गहरा अंधेरा होगा
क्या मेरे बच्चे का चेहरा
रोशनी की किरण बनकर मेरे ज़हन से नहीं उभरेगा?
मौत कितनी दूर, आख़िर मुझे ले जाएगी
क्या अपने बच्चे की आवाज़ भी मुझे सुनाई नहीं देगी?
मौत का ज़ायका कैसा होगा?
और भी कड़वा या इतना लजीज़
जब मांस चीरते रग-रग दर्द में तड़पी थी
दर्द के दरिया में गोता लगाकर
एक और मांस मैंने तख़्लीक किया था
क्या ममता के आड़े भी
मौत के समन्दर की लहर तेज़ है?
मेरे बच्चे के आँसू
उस बहाव में मुझे क्या बहने देंगे?
आख़िर कब तक मैं खामोश रहूँगी
अपने बच्चे को सीने से लगाए बिना
साफ सुथरे कफ़न में लिपटी हुई
अकेली किसी अनजान दुनिया की ओर चली जाऊँगी
मौत, मेरे गले में अटका हुआ इक सवाल है
और ज़िन्दगी
मेरे बच्चे का दिया हुआ चुम्बन!

नज़्म मुझे लिखती है

जब दर्द का सागर तड़प उठा
लहरों का सालना, आँखों को साहिल पार न कर सका
होंठ किसी वीरान जज़ीरे की मानिंद अजनबी ही रहें
तो नज़्म लिखना मेरे बस में कहाँ?
नज़्म मुझे लिखती है
जब तन्हाई के घने अंधेरे में
आस का एक दीपक भी न हो
मेघाच्छन्न रात में तारों के समान
दोस्त नज़र न आएँ
तो नज़्म लिखना मेरे बस में कहाँ?
नज़्म मुझे लिखती है!

बीस सालों की डुबकी

भुलक्कड़पन की इतनी आदत है
जाने क्या क्या बिसर जाता है
सोच सोच कर मन उलझता है
दिल कहता है वक़्त की कश्ती से
छलाँग लगाकर, एक बार देख आऊँ
डुबकी लगाकर बीस साल पहले वाले
बहाव से जा मिलूँ
शायद! मैं भूल आई हूँ
कोई बंद लिफ़ाफा
भावनाओं में डूबे लफ्ज़
तरसते हों मेरे नयनों के लिये
शायद, फोन का रिसीवर
ठीक तरह से न रख आई हूँ
किसी की उंगली मेरा नम्बर मिलाते हुए
थक गई हो
शायद, मेरे जन्मदिन पर
कोई अपने हाथ में नरगिस के फूल थामे
मेरा दरवाज़ा खटखटा रहा हो
शायद, कोई सहेली
तेज़ बारिश में भीगती हुई
मेरे लिये लालायित हो
सोच सोच के मन परेशान होता है
जाने क्या क्या बिसर जाता है!

जख़्मी वक़्त

चीख बनकर गले से निकलना चाहती हूँ
आँसुओं की तरह वक़्त की आँखों से बहना चाहती हूँ
खौफ़ की छुरी से मांस को दिये गए चीर
महँगाई की चुटकी से नमक छिड़कना
सिसकी बनकर सहमे हुए चेहरों के सीने से निकलना चाहती हूँ
माँओं की गोद में कटे हुए शीश
गमज़दा आँगनों में बेवाओं की टूटी चूड़ियाँ
करबला की धरती के समान चटकना चाहती हूँ
क़ब्र में कत्ल हुए पिता की बे-आराम हड्डियाँ
जेल में बेगुनाह बेटे की आशावादी आँखें
कराची की कोख से खंजर निकालना चाहती हूँ!

सरकश वक़्त

ख़्वाहिशों की चिंगारी
सपनों की हवा से भड़क कर
पहाड़ जितनी हो गई है
वक़्त से बड़ा सरकश कौन है?
ज़माने की हक़ीक़तें समन्दर बनकर
जब सामने आती हैं
आसमान से बतियाती ख्वाहिशों का शोला
सपनों के आगोश से निकलकर
समन्दर जैसे वक़्त के सीने पर
गर्दन टिकाकर लेटा रहता है!

झुनझुना

दीवारों, दर-दरीचों और छत की
तरतीब को घर कहते हैं
उसी घर में रहने के लिये
जिस्म का झुनझुना बजाकर
तुम्हें बहलाए रखना है
पर क्या किया जाय?
हाथ में थामे इस झुनझुने
और मेरे जिस्म में फ़र्क़
मुझे मालूम हो चुका है
आसमानी किताब कहता है कि
मैं तुम्हारी खेती हूँ
जब भी, जैसे भी चाहो
उस फसल को काट सकते हो
पर क्या किया जाय
मेरी सोच और शऊर के अंकुर
तुम्हारी हँसिया के पकड़ में नहीं आएँगे!

मामता की ललकार

हर किसी के दर्द अपने लगते हैं
मेरी रग-रग का मंथन कर देते हैं
किसी भी दिल पर हो दुखों की बरसात
नयन मेरे झरने बनकर बहते हैं
बच्चों के मुरझाये चेहरे और उनकी सिसकियाँ
मेरी मामता को ललकारती रहती हैं।

क्षण भर का डर

क्या वक़्त की सबसे छोटी इकाई
फ़क़त एक पल है!
नज़्म के फोकस में पकड़ा जा सकता है
आँखें झपकने से भी पहले
आँसुओं की तरह, पलकों में ही
कहीं अटक कर रह गया
किसी का रूमाल!
खुद में उसे समा सकता है
उंगलियों के पोरों में
तड़पते उस दुख को
कौन लफ़्जों की उड़ान दे सकता है?
अधूरे बालक की तरह मेरे जिस्म से नाता तोड़कर
पल छिन में कहाँ गुम हो गया
उसे सोचने के लिये, यादें बुनने का हुनर
कौन सिखा सकता है?
वह दुख जिसे
कहानी, नज़्म या कोई भी तख़्लीक
अपने अन्दर समा न सकी
ख़लाओं में रह गए उस दुख को
किसकी कोख पनाह दे सकती है!

यह सोचा भी न था

यादों के बबूल, गुलाब की तरह
मन आँगन में खिल उठेंगे
यह तो मैंने सोचा भी न था!
फासले अमावस के अंधेरों को उकेर कर
चौदवीं के चाँद की तरह
मुझसे नैन मिलायेंगे
यह तो मैंने सोचा भी न था
मैं समझी थी
गुज़रा वक्त वापस न आएगा
मेरे कमरे के आईने में
बिछड़े चेहरे
मुस्करा कर मुझे सीने से लगाएँगे
यह तो मैंने सोचा भी न था!

चाँद की तमन्ना

जुदाई मंजिल है जिसकी
इश्क की उन पेचीदा पगडंडियों पर
दुबारा चलने को जी चाहता है
ज़िन्दगी के इस मोड़ पर
सभी खुशियाँ हैं मेरी झोली में
सुकून की इस माला को
दुबारा बिखेरने को जी चाहता है
वक़्त ने यादों के जख्मों पर
कड़ियाँ बाँध दी हैं
उन्हें अपने ही नाखूनों से
कुरेदने को जी चाहता है
कितने ही बरस लगे थे
हक़ीकतों को जानने में
आज फिर पेड़ पर चढ़कर
चाँद तोड़ने को जी चाहता है!

झूठा आईना

वीरान आँखें, झुर्री-झुर्री चेहरा
किसका है?
आईना झूठ बोलता है
झूठ और फरेब की दुनिया में
कोई किस पर कैसे भरोसा करे?
आईना झूठ बोलता है
ठोड़ी तले लटकता मांस
बाल है चाँदी की तारें
आईना फ़कत मुझे चिढ़ाता है
आईना झूठ बोलता है
कोई इस बैरी को फाँसी पर लटका दे
आईना झूठ बोलता है!

इन्तहा

आज, जब उसका पेट भी
गले तक भर गया
तब दर्द ने जुगाली* की है
जुदाई की डायन भी तड़प उठी
फ़ासले का भी हृदय फटा है
ज़िन्दगी की किताब भी रही अधूरी
न जाने कहाँ कहाँ से पन्ना फटा है
ज़िन्दगी के गले में पहनी
रिश्तों की माला कमज़ोर थी
दाना-दाना होकर मोती बिखरा है!

*जुगाली = ruminate

एटमी धमाका

सहाई मेरी बेटी
लता के गीत सुनते सुनते
सो रही है
ख़्वाब में मुस्कराते न जाने क्या क्या सोच रही है
वह क्या जाने! हिन्द क्या है? सिन्ध क्या है?
कश्मीर की हसीन वादी पर
उड़ते परिन्दों का मज़हब कौन सा है?
नूरजहां किसकी और लता किसकी उत्तराधिकारी हैं
वह, न तो अख़बार पढ़ सकती है
और न टेलीविज़न की प्रचारी ख़बरें समझ सकती है
वह तो 'डिश' के जरिये माधुरी संग
हम रक्स हो जाती है
हिन्दू-पाक की सियासत से बेख़बर
हर वक़्त शाहरूख़ खान से मिलने के
सपने देखती है
और आज ढोलक की ढम ढम पर
एटम बम की तस्वीर को नचाते देखकर
बाग़ों में फूलों के बीच
चाग़ी पहाड़ का मॉडल देखकर
पूछती है कि यह क्या है?
फूल पत्थर, खुशबू वाली
मौसीकी और एटम बम का आपस में
क्या रिश्ता है?
क़ादिर खान से ज़्यादा मुश्किल मेरा काम है
माँ के सीने से लफ़्ज़ों का होंठों तक का सफ़र पेचीदा है
हाँ, तुम जैसे करोड़ों मासूमों के

क़ीमे से बनता है चाग़ी का पहाड़
आशा और इक़बाल बानू की आवाज़
रेत बनकर उड़ती है
एटमी धमाका मुबारक
एटमी धमाका मुबारक
कहने वालों की आत्मा भी
सदियों तक रक्स करती रहेगी
हिरोशिमा और नागसाकी जैसी धरती पर!

उड़ने की तमन्ना

ऐ कवि तुम्हारी कविताओं से
अब उड़ जाने को मन चाहता है
सदियों से यहाँ
तुमने मेरा दम घोंट रखा है
मेरे नारंगी की फाँक जैसे होंठ
जो सिर्फ़ तेरे चूमने के लिये नज़र किये गये थे
आज बोलने के लिये इच्छुक हैं
कहो! तुम्हारे मेरे कैसे नाते हैं
तुम्हारी कविता की रिसायत में
मैं तो एक दासी हूँ
इन्तज़ार में पलकें बिछाए बैठी हूँ
तुम्हारा वस्ल ही एक चहचहाहट है
मेरी और कोई ज़िन्दगी नहीं
इन कारी कजरारी आँखों में
तुम्हारा ही सपना है
जिसमें देखूँ अपने आपको
तुम्हारे दीवान में ऐसा आईना ही नहीं
मेरे काले बालों में तेरी रात बीते
लाल गालों से सुबह की उजली किरण फूटे
पर मेरी चाहत क्या है
तुम्हारे शब्दकोश में उसका
कोई भी अर्थ नहीं!

सिसकी, ठहाका और नज़्म

मैं अपने पैरों तले जन्नत निकालकर
खुशी से तुम्हें सौंपने के लिये तैयार हूँ
अपने पैरों में पहनी
गृहणी और ममता की ज़ंजीर को
फ़क़त थोड़ा ढीला कर रही हूँ
मैं ज़्यादा दूर नहीं जाऊँगी
खुद से मिलने जा रही हूँ
एक ठहाका लगाकर, सिसक कर
या एक नज़्म लिखकर लौट आऊँगी
मैं आज़ाद औरत हूँ पर...!
अगर मेरे बच्चों के बालों में लीखें पड़ जायें
गर्दन पर पसीने से मिली मैल नज़र आए
मेरे खाने में मसाले की तरतीब गड़बड़ हो जाय
बच्चों के होमवर्क वाली कॉपी पर
Not done लिखा आ जाय
मैं घर आए मेहमानों का स्वागत करते हुए
एक प्याली चाय भी न पिला सकूँ
ऑफिस से लौटे, थके मांदे पति से
हाल भी न पूछूँ
सिसकियों में जकड़ी सांसें, हँसी से फटी हुई आँखें
नज़्म अधूरा ख़्वाब लगती है
खुदा ने प्रतिभा अता करते हुए, इमाम बनाते हुए
पूरी कलंदरी बख़्शते हुए
मुझपर ऐतबार न किया था
बाक़ी कौम को बेहतरीन नस्ल देने की
ज़िम्मेदारी मेरी है

उन आला मनसूबों पर काम करते
मैं थक भी तो सकती हूँ
मेरी इक़्तिफाक़ी छुट्टी मंजूर हो चुकी है
मैं जा रही हूँ
एक सिसकी, एक ठहाका लगाने
और नज़्म लिखने
छुट्टी नैतिकता के तौर मंजूर हो जाने के बाद भी
घर की हर इक चीज़ को मुझसे शिकायत क्यों है
बच्चों के चेहरों पर गुस्सा देखकर सोचती हूँ कि
ठहाका अय्याशी, सिसकी आशा
और नज़्म मेरे पावों में चुभा शीशा है
मेरी माँ कहती है कि
'तुम मुझसे बेहतर माँ नहीं हो'
मेरी बेटी मेरे हाथों से क़लम छीनकर कहती है
'फ्रेंच फ्राइज बनाकर दो'
मैं सोचती हूँ कि मेरी बेटी को भी जब
एक ठहाका, सिसकी, नज़्म या तस्वीर बनाने के लिये
अपनी ज़िन्दगी की तिजोरी से
कुछ पलों की दरकार होगी
तो मैं उसे क्या सलाह दूँगी?
ठहाका, बचपन की कोई बिछड़ी सखी
सिसकी, हाथों से उड़ा हुआ परिन्दा
और नज़्म गुनाह है!

आईने के सामने

मेरे गालों पर लाली और
नैनों में खुमार
रात को देखा हुआ अधूरा ख़्वाब है
आईना सच कहता है
चेहरे की झुर्री की तहों में
यादों का बिछाया हुआ जाल है
आईना सच कहता है
मन कहता है आज फिर
किसी अल्हड़ लड़की की तरह
लपक कर दोनों हाथों में चाँद थाम लूँ
पर चाँद में आज कहाँ है
पहले सी चमक
आईना सच कहता है!

अधूरे ख़्वाब

अधूरे ख़्वाब, मेरी आँखों में
टूटे शीशे की मानिंद चुभते ही रहे
अधूरे बालक की सिसकियाँ
मेरी कोख में उधम मचाती ही रहीं
उसका कोई नाम हो तो पुकारूँ
वजूद हो तो छूकर देखूँ
जज़्बे ममता के इसरार के
लफ़्ज़ ढूँढते ही रहे
उसके वजूद की खुशबू
मेरे हवासों की तहों में गुम हो गई
अधर और छाती के बीच में
मौत फासला बनकर फैल गई
मेरी उंगलियों के पोर
स्पर्श ढूँढते ही रहे
अधूरे बच्चे के लिये
ममता का पूरा जज़्बा
सम्पूर्ण दर्द बनकर
वजूद में समा गया!

आईना मेरे सिवा

ऐसे ही कभी चलते चलते
वक़्त के पीछे दौड़ते
अगर मैं रुक गई!
यक़ीन करना कि मैं धरती पर न रहूँगी
मैं कहाँ रहूँगी?
यह मैं कैसे जानूँगी
याद का काँटा तुम्हें चुभ जाये
मेरे बाद तेरी आँखों में अश्रु आ जाएँ
उन्हें मैं कैसे पोछूँगी?
मंजर और सभी आँखों में समा जायेंगे
आईना मेरे सिवा कैसा लगता है?
यह मैं कैसे देखूँगी!

ज़िन्दगी

ज़िन्दगी दिन-ब-दिन भली लगती जा रही है
मुट्ठी से रेत की तरह फिसलती जा रही है
अभी तो बौराये थे उम्मीदों के गुन्चे
गुलमोहर की तरह ज़िन्दगी झड़ती जा रही है
ज़िन्दगी इतनी प्यारी जैसे मेरे बालक की मुस्कान
मेले में छुड़ाकर उंगली मेरी
ओझल होती जा रही है
जीने की चाह ने दर्द के समंदर का उत्थान करवाया
मौत जैसी नींद नैनों में उतरती जा रही है!

चाइल्ड कस्टडी

कौन यह जानता था
लज़्ज़त के लम्हों में
मेरे वजूद में
औलाद का बीज बोने वाला
एक दिन मेरी झोली में,
अंगारे भर देगा
मेरी नसों से ख़ून भींचकर
ज़िन्दगी का लुत्फ़ लेने वाला
मेरे ही वजूद का हिस्सा
मुझसे छीनकर अलग कर देगा
दर्द की इन्तहा से गुज़रकर
जो जीवन मैंने जिया है
अदालत के कटघरे में खड़े होकर
फैसला सुनने के लिये
मुझे अपने कान पराये करने पड़ेंगे
जनम से मुझे बताया गया था कि
अल्लाह की नाफ़रमानी करने पर
अज़ाब टूट पड़ेंगे
क़ब्र इतनी संकीर्ण बन जायेगी
जिस्म की हड्डियाँ भी चटक जायेंगी
बिच्छू, साँप, बलायें जिस्म से चिपके होंगे
मर्द की नाफ़रमानी के एवज़
बच्चे को देखे बिना
कितने सूरज बुझ गए हैं
मामता की जुदाई की क़ब्र में
ऐ खुदा! तुमने कभी झाँका है?

तुम्हारी ओर से नाज़ल की गई
सभी आसमानी पन्नों में दर्ज
मुक़र्रर किये हुए अज़ाबों की व्याख्या
टीका बनकर, शर्मिंदगी के मारे
गर्दन झुकाए खड़ी है
अगर वो एक बार सर ऊपर उठाकर
माँ के नयनों में देखे
तेरी क़सम
ख़ाक बन जाये
तुम्हारी जज़ा और सज़ा से
वह माँ अब क्या डरेगी
जो कोर्ट के कटघरे तक पहुँचने के लिये
पुलीस, प्रेस और वकीलों के
गलीज़ वाक्यों के बिच्छुओं जैसे डंकों से
रूह तक डसी हुई है!

फ़ासला

यह भी कोई फ़ासला है
मेरे आईने में तेरा चेहरा है
जुदाई की यह कैसी तन्ज़ है
मेरे वजूद में तुम्हारी खुशबू है!

लेखिका : Attiya Dawood

Education : M.A. (Sindhi Literature)

Professional Experience : Freelance Drama Writer— Written a number of plays and serial for television.

Dramatisation : Amrita Pritam, Khadeeja Mastoor, Mohan Kalpana and others. Documentaries researched and directed on Mai Jori and Street Children. Gaave Lecturs in the University of Texas, University of Wisconsin, University of Virginia and Columbia University

Published Books : Raging to be free, Sharafat Ji Pulsiraat/ Sharafat Ka Pulsiraaat (Sindhi-Urdu), Aap Ka jism Aur Sehat, Sindhi Aurat Ki Kahani, Sindh Ki Aurat, Sapney Se Sach Tak, Unpoori Chadar, Aaine Ke Samne

Translated works by the author :

Jagti Aankhon Ke Sapne, poetry by Amar Sindhu. Untitled compilation of articles on flood victims by Dr. Arfana Mallah.

International Seminars and Conferences attended in New Delhi, Kathmandu, Beijing, Dhaka, Berlin, Washington, Mumbai etc.

Awards and Achievments : 'Sindhi Adeeb Award' from Akhil Bharti Sindhi Boli and Sahitya Sabha in Bombay, Two literary sittings conducted in her honour at the Sahitya Academy, Bhopal.

address : T-72 Florida Homes, 33rd Street,
Phose 5, DHA, Karanchi
Phone : 0336-3748212
email : attiyadawood@gmail.com

अनुवादिका : देवी नागरानी

जन्म : 11 मई, 1941, कराची (पाकिस्तान, तब भारत)

सम्प्रतिः शिक्षिका, न्यूजर्सी, यू.एस.ए. (रिटायर्ड)

सम्मान-पुरस्कार :

अंतराष्ट्रीय हिंदी समिति, शिक्षायतन व विध्याधाम संस्था, काव्य रत्न सम्मान, काव्य मणि-सम्मान, ''Proclamation Honor Award-Mayor of New Jersey, सृजन-श्री सम्मान, रायपुर-2008, काव्योत्सव सम्मान, मुंबई-2008, ''सर्वभारतीय भाषा सम्मेलन में सम्मान-2008, राष्ट्रीय हिंदी भाषा विकास परिषद पुरस्कार-2009, ''ख़ुशदिलान-ए-जोधपुर'' सम्मान-2010, हिंदी साहित्य सेवी सम्मानभारतीय

नार्वेजीयन सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम, ओस्लो-2011, मध्य प्रदेश तुलसी साहित्य अकादेमी सम्मान-2011, जीवन ज्योति पुरस्कार, गणतंत्र दिवस, मुंबई-2012, साहित्य सेतु सम्मान, तमिलनाडु हिन्दी अकादमी-2013, सैयद अमीर अली मीर पुरस्कार, मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति-2013, डॉ. अमृता प्रीतम लिट्री नेशनल अवार्ड, नागपुर-2013, साहित्य शिरोमणि सम्मान-कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड़-2014, विश्व हिन्दी सेवा सम्मान अखिल भारतीय मंचीय कवि पीठ, यू.पी. -2014, भाषांतर शिल्पी सारस्वत सम्मान-भारतीय वाङमय पीठ कोलकाता, जनवरी-2015, हिन्दी सेवी सम्मान-अस्माबी कॉलेज, त्रिशूर, केरल सितंबर-2015

USA-480 W Surf Street, Elmhurst IL 60126
Email: dnangrani@gmail.com
PH. 9987928358